अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-41, अंक-13, 16-28 फरवरी, 2018

22 फरवरी : कस्तूरबा गांधी पुण्य-तिथि : विनम्र स्मरण

''अगर कभी देश को आजादी मिली तो तू मेरे साथ नहीं होगी...मैं अकेला हूंगा। तू ही समझती थी आजादी का मतलब मेरे लिए क्या है। पता नहीं वह आजादी कितनी अधूरी या पूरी होगी? कितनों ने इस आजादी के लिए प्राण गंवाये...सबके लिए आजादी की अलग-अलग परिकल्पना रही होगी...उसे पाने की राह भी अलग होगी। तूने मेरे रास्ते को चुना और कंधे से कंधे मिलाकर चली, और चलाया भी।''

-गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 41, अंक : 13, 16-28 फरवरी, 2018

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
फोन : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. ग्राम स्वराज्य को लक्ष्य बनायें... 2
2. सेवाग्राम का गुणा करें... 3
3. हिन्दू धर्म स्वरक्षण भी नहीं कर सका... 4
4. और मुकदमा उठा लिया गया... 7
5. 'युद्ध और शांति' बनाम 'युद्ध और... 11
6. हिमालय : 'विकास' यानी पागल... 14
7. साहित्य-समीक्षा : 'मन हुआ पलाश'... 15
8. उपन्यास : 'बा'... 17
9. गतिविधियां एवं समाचार... 19
10. दो कविताएं... 20

प्रधान संपादक की कलम से...

ग्राम स्वराज्य को लक्ष्य बनायें

आज भारतीय ग्रामीण समाज में गहन आक्रोश व हताशा है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि गांवों में, किसी भी रूप में स्वराज्य का दर्शन नहीं हो रहा है। आजादी के बाद की पीढ़ी इस विश्वास में जी रही थी कि जो स्वराज्य आया है, वह दिल्ली एवं राज्य की राजधानियों से निकल कर, उनके गांव तक आयेगा। गुलामी के दौरान शहर के केन्द्र गांव के शोषण के माध्यम थे, गांव के संसाधनों के दोहन के माध्यम थे। विश्वास जगा था कि गांव का पुनर्निर्माण होगा, तो गांव खुशहाली एवं स्वराज्य के केन्द्र बनेंगे। रोजगार और सामुदायिकता बढ़ेगी। शहर के उद्योग व गांव के उद्योग परस्पर पूरक होंगे। अब शहर के उद्योगों के कारण गांव के उद्योग-धंधों का ह्रास नहीं होगा।

आजादी के सत्तर वर्षों बाद ग्राम स्वराज्य का लक्ष्य न केवल दूर हो गया है, बल्कि परिवर्तनकारी समूहों के क्रांति-लक्ष्य में भी इसकी चर्चा खत्म होने लगी है। ऐसे में इसके सैद्धांतिक तथा व्यवहारिक पक्षों पर पुनः जोर देने की आवश्यकता है। आजादी के बाद भारतीय राष्ट्र राज्य के निर्माण का अभियान दो तत्त्वों पर आधारित था : एक, लोक व दूसरा राष्ट्र निर्माण। यह निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया कि राष्ट्र राज्य में संप्रभुता का अधिष्ठान स्वाभाविक रूप से लोक में होगा। इसी से राष्ट्र राज्य में लोकतंत्र के विकास को सैद्धांतिक आधार प्राप्त हुआ।

राष्ट्र का निर्माण लोक के जुड़ाव (स्वाभाविक सदस्य होने की भावना) पर आधारित होता है। जबकि राज्य, हिंसा शक्ति व दंड शक्ति पर टिके थे, टिके हैं। जैसे-जैसे राज्य अपने को राष्ट्र में विलीन करता जायेगा, लोक संप्रभुता का आधार मजबूत होता जायेगा। राष्ट्र की सदस्यता, समुदाय का सदस्य होने की भावना का ही विस्तार है। इस कारण लोक की संप्रभुता का आधार लोक सत्ता के निर्माण से ही बनेगा। लोक की सत्ता का निर्माण लोक समुदाय के केन्द्र में आने से बनेगा और इसका विस्तार राष्ट्र तक फैलते जाने से लोक की सम्प्रभुता स्थापित होगी। इसलिए सच्चे लोकतंत्र की स्थापना तभी होगी जब लोक समुदाय को मजबूत करने के तंत्र विकसित हों तथा लोकतंत्र के मूल्य लोक समुदाय में रच बस जायें। इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि लोकतंत्र कोई ढांचा नहीं, बल्कि लोक सत्ता तथा लोक संप्रभुता प्रकट करने की एक संघर्ष यात्रा है। भारत में लोक संप्रभुता का सगुण रूप ग्राम स्वराज्य के माध्यम से प्रकट होगा।

ग्राम स्वराज्य की संभावना को खत्म करने में दो तरह की शक्तियां क्रियाशील हैं। एक तो वैश्विक पूंजीवादी बाजार की शक्तियां, जो बहुराष्ट्रीय निगमों के माध्यम से क्रियाशील हैं। इन्होंने पहले गांव के उद्योग-धंधे नष्ट किये और अब कृषि स्वावलंबन को नष्ट करने में लगे हैं। बीज, उर्वरक, कीटनाशक, मृदा-संरक्षण, जल स्रोत, ऊर्जा स्रोत सब इनके नियंत्रण में जा रहे हैं। और, अब कन्ट्रैक्ट फार्मिंग के माध्यम से किसान आधारित खेती से कारपोरेटी खेती का मार्ग प्रशस्त किया जा रहा है। किसान आंदोलन यदि सब्सीडी और कृषि मूल्य के सीमित लक्ष्यों पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे तो, धीरे-धीरे खेती किसानों के हाथ से निकलकर, कारपोरेटी घरानों के हाथों में चली जायेगी। और, इस प्रक्रिया में गांव व लोक समुदाय दोनों खत्म हो जायेंगे।

दूसरा कारण यह है कि गांव की आंतरिक शोषण भी वहां की सामाजिक संरचना के निर्धारण का मुख्य तत्त्व बन चुका है। जातीय विद्वेष एवं गांव का शोषण करने वाली शक्तियों की दलाली करने वाला एक नया वर्ग तैयार हो चुका है। इन्हें राजनीतिक संरक्षण भी प्राप्त है। गांव से गांव के बीच के आपसी आर्थिक संबंध भी कमजोर हुए हैं। एक गांव अपने आसपास के 15-20 गांवों के साथ मिलकर अपनी स्वायत्तता कैसे खड़ी करेगा, इसका प्रयोग ही रचनात्मक आंदोलन का लक्ष्य होना चाहिए। अहिंसक श्रम शक्ति ही इसका वाहक होगी। श्रम के शोषण पर टिके, श्रम न करने वाले वर्ग को बेअसर करके ही अहिंसक श्रम शक्ति प्रभावी बन सकेगी। अहिंसक श्रम शक्ति ही गांव की पूंजी व गांव में उपलब्ध संसाधनों का रूपांतरण कर ग्राम स्वराज्य की स्थापना कर सकेगी। इसके लिए गांव की पूंजी तथा गांव के संसाधनों को वैश्विक पूंजी व वैश्विक पूंजीवादी बाजार की जकड़न से बाहर निकालने का संघर्ष करना होगा। पूंजी की शक्ति को लोकसत्ता के अधीन, लोक की शक्ति का एक हिस्सा बनाना होगा। ग्राम स्वराज्य के विभिन्न पक्षों पर एक साथ आंदोलन चलाना होगा तथा किसान आंदोलन उसका एक हिस्सा होगा।

बिमल कुमार

सेवाग्राम का गुणा करें

❑ गांधीजी

यहां जो विद्यार्थी विद्याभ्यास के लिए आये हैं, उनसे मैं बहुत आशा रखता हूं। मैं ही नहीं, किन्तु जनता जो इस काम में रस लेती है वह भी काफी आशा रखती है। हिन्दुस्तान में बहुत-से ऐसे पढ़े-लिखे लोग हैं जो हमारे कार्यक्रम की टीका-टिप्पणी करते हैं और निन्दा भी करते हें। कुछ सिद्धांत की दृष्टि से भी इसका विरोध करते हैं। ऐसे लोगों के बारे में मैं अभी कुछ नहीं कहना चाहता, यद्यपि मैं उसका भी जवाब दे सकता हूं। लेकिन जो लोग इस काम में दिलचस्पी लेते हैं और चाहते हैं कि हम इसमें कुछ हिस्सा लें, उनकी बात हमें सुननी चाहिए। ऐसे लोगों के दिल में खादी, ग्रामोद्योग, गोसेवा, हरिजन सेवा के संबंध में काफी आशा भरी है। उनकी आशा सफल करने के लिए हमें भरसक प्रयत्न करना चाहिए। पेट भरने का साधन पाने के लिए आप अगर यहां आये होंगे तो उससे यह आशा सफल नहीं होगी।

सरकारी विद्यालयों में काफी लोग जाते हैं। वहां डिग्री हासिल करते हैं। वे सोचते हैं कि इस शिक्षा से हम धन प्राप्त करेंगे, कीर्ति हासिल करेंगे, कम से कम सरकारी दफ्तर में क्लर्क बनेंगे या चपरासी तो हो ही सकते हैं। चपरासी थोड़े ही कायम के लिए रहेंगे? आगे तरक्की होगी और कुछ पैसे तो यूं ही मिलेंगे। मतलब यह कि वे समझते हैं कि सरकारी नौकरी मिल गयी तो जीवन सलामत हो जाता है। यह एक ऐसी विडंबना है जिस पर गौर करना चाहिए। सरकार ने अपने विद्यालयों में बहुत सहूलियतें दी हैं। बड़े-बड़े मकान दिये हैं, बड़ी-बड़ी छात्रवृत्तियां दी हैं, प्रवास की सहूलियत दी है। इसके मुकाबले में हम कैसे खड़े रह सकेंगे?

इस प्रश्न को हल करने के लिए कई रास्ते मैं पहले बता चुका हूं। आप यहां सहूलियतों या वेतन के मोह से नहीं आये हैं। अगर आपको अपने ध्येय में सफलता पानी है तो आप याद रखें कि आप यहां सिर्फ कारीगरी सीखने नहीं आये हैं। कारीगरी तो सीखना है ही, लेकिन उतने से संतोष न मान लें। देहात में कारीगर तो पड़े हैं। वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी यही काम करते आये हैं। उनका मुकाबला आप कैसे कर सकते हैं? क्रिया तो आप सीखें परंतु उसके साथ-साथ शास्त्रीय ज्ञान होना चाहिए। बार-बार यह प्रश्न उठना चाहिए कि हम यह क्यों कर रहे हैं, किस तरह करें, इसका संबंध स्वराज्य से कैसे जोड़ा जाये। स्वराज्य अहिंसा से पाना है। हिन्दुस्तान के देहात में करोड़ों पड़े हैं, उन्हें डबारना है, उनकी सेवा करनी है, उन्हें इसकी कीमत बतानी है। अगर आप ऐसा समझते हैं कि मिल वाले लोगों को पेट-भर दे सकते हें और उससे आपको संतोष होता है तो आपको यहां नहीं पढ़ना चाहिए। लेकिन मिल वाले तो मुट्ठी-भर को ही दे सकते हैं। करोड़ों का ख्याल मिल वाला करता ही नहीं। मुझे कोई मिल वाला अभी तक नहीं मिला है, जिसने कहा हो कि मिल के जरिये हम करोड़ों को काम दे सकते हैं।

आप कितना महाभारत काम करने आये हैं! आपको करोड़ों की सेवा करनी है। आप लोग 61 हैं, यह महत्त्व का प्रश्न नहीं है। यदि आप शास्त्रज्ञ होकर गये तो काम हो गया। आपको 61 करोड़ों के संरक्षक या ट्रस्टी बनना है। यह सिलसिला चल पड़ा तो आपकी संख्या बढ़ती ही जायेगी। यह विद्यालय गंगोत्री-जैसा है बाद में गंगा के समान उसका प्रवाह विस्तृत होता चला जायेगा। यह मेरा स्वप्न है। पचीस वर्षों से मैं इसे देख रहा हूं। जो आशा रखता हूं वह नहीं फली, परंतु फिर भी मैं निराश नहीं हूं, क्योंकि मैं कभी निराश होता ही नहीं। बड़ा काम जल्दी नहीं चलता। अहिंसा धीरे-धीरे चलती है लेकिन अचूक चलती है। उसका रास्ता सीधा है। विमान-वेग से चलने वालों को भी वह पीछे डाल देगी। मेरा यह दृढ़ विश्वास है।

जो ज्ञान आप यहां से प्राप्त करके जायेंगे, उसे देहातियों को देना है। उनमें उसके लिए रस पैदा करना है। लेकिन यह काम आसान नहीं। मैं सेवाग्राम में वर्षों से पड़ा हूं। यहां चरखा संघ, ग्रामोद्योग संघ, गोसेवा संघ आदि के दफ्तर हैं। यहां अच्छे कार्यकर्ता पड़े हैं। सहूलियतें भी जो और जगह नहीं हैं, वे यहां हैं। फिर भी मैं जो करना चाहता था वह नहीं कर सका। इससे आपको निराश नहीं होना चाहिए। लेकिन आपके मन में यह प्रश्न उठना चाहिए कि हम यह क्यों नहीं कर सके। शिक्षकों के पास इसका उत्तर होना चाहिए। यहां जो लोग बैठे हैं वे दगा-फरेब के लिए नहीं। कभी-न-कभी इसकी कुंजी हाथ में आयेगी, इस दृढ़ विश्वास से वे यहां बैठे हैं। सेवाग्राम का गुणा करना है। एक गांव का विचार नहीं करना है। हिन्दुस्तान का, मैं तो सारे संसार का विचार भी कर लेता हूं। अगर एक सिर्फ सेवाग्राम को ही देखना होता या अहिंसा और सत्य का ख्याल छोड़कर हमें करना होता तो इसे हम कर दिखाते, लेकिन इससे संसार की पीड़ा

नहीं टलती। संसार में हिन्दुस्तान एक बिन्दु है। सेवाग्राम उस बिन्दु का भी बिन्दु है। सेवाग्राम में जो हो सकता है वह सारे संसार में भी हो सकता है। इसके लिए 100 वर्ष भी मैं व्यतीत कर सकता हूं।

जो मेरे पास है वह यदि आप संतोष से सीखना चाहें तो मैं सिखा दूंगा, लेकिन वह पैसे कमाने का नहीं। ऐसे तो मैं हजार-दो हजार रुपये कमा सकता हूं। आजकल तो महात्मा भी हूं। इससे मुझे दो हजार कोई भी दे देगा। लेकिन मैं यह नहीं चाहता। और इससे ही मैं करोड़ों इकट्ठा कर सकता हूं लेकिन घर में रखने के लिए नहीं। मेरे लिए मुझे रोटी से अधिक कुछ नहीं चाहिए। इसी तरह आपको भी सूखी रोटी से संतोष होना चाहिए। यहां का काम आसान नहीं है। अगर आपको इसमें संतोष न हो तो यहां से आपको जाना चाहिए। दूसरी तरफ आपको काफी पैसा मिल सकता है। लेकिन यहां रहना है तो संतोष से रहना चाहिए। यदि आप यह भावना रखेंगे कि मैं करोड़ों के साथ एक होता हूं तो तेजस्वी बनेंगे।

आप लोग यहां भिन्न-भिन्न प्रांतों से आये हैं। एक भोजनालय में भोजन करते हैं—एक साथ रहते हैं। आपका दिल साफ हो जाना चाहिए। हम सब एक हैं। मैं तो अब कहने लगा हूं कि हम सब हरिजन हैं—हरिजन क्या, भंगी हैं। ऐसा आपका मन हो जायेगा तभी काम चलेगा। आपको प्रतिक्षण जाग्रत रहकर काम करना होगा। आपकी परीक्षा होगी, प्रमाण-पत्र भी मिलेगा। लेकिन उससे आपकी कीमत नहीं होगी। प्रमाण पत्र दूसरों को दिखलाने के नहीं हैं। उससे आपको सिर्फ यह मालूम होगा कि आप कहां तक आ गये हैं। उससे आगे बढ़ना है। आप जो काम करेंगे उससे आपकी योग्यता का पता लगेगा, प्रमाण पत्र दिखाने से नहीं। और जगह प्रमाण पत्रों की कदर है, पर हमें मूल्य बदलना है, जीवन की दृष्टि बदलनी है, वस्तुओं को देखने का तरीका बदलना है। ❑

प्रश्नोपनिषद

हिन्दूधर्म स्वरक्षण भी नहीं कर सका और न ही राष्ट्ररक्षण

❑ **विनोबा**

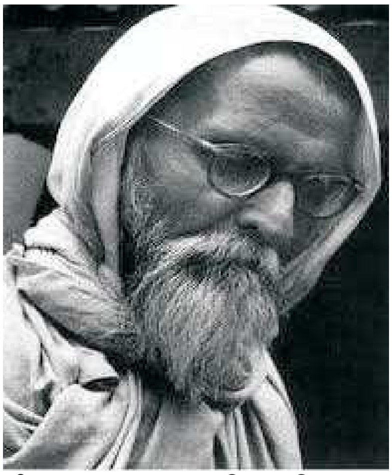

(तारीख 5.12.1970 : ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार के बुजुर्ग सदस्य श्री बालुभाई मेहता के साथ)

प्रश्न : आपने एक जगह कहा है कि हिन्दूधर्म का *अद्वैत सिद्धांत* होते हुएभी उसमें सेवाभाव का अभाव दिखायी देता है। इसका क्या कारण? क्या यह कह सकते हैं कि यद्यपि समाज ने उस तत्त्वज्ञान को बौद्धिक स्तर पर माना था, वह लोक-हृदय तक पहुंचा ही नहीं था?

हिन्दूधर्म *स्वसंरक्षण* भी कर नहीं सका और *राष्ट्ररक्षण* भी नहीं कर सका। परदेश के जो अनेक आक्रमण हिन्दुस्तान पर हुए, उन्हें रोकने की शक्ति हिन्दूधर्म में नहीं दिखायी दी। एक और भी सोचने की बात है। हिन्दूधर्म राष्ट्रीयता की भावना को जितना पोषक होना चाहिए था, उतना पोषक सिद्ध नहीं हुआ। इसका क्या कारण?

उत्तर : भारत में बहुत बड़ा तत्त्वज्ञान पनपा—अद्वैत। इससे बढ़कर तत्त्वज्ञान नहीं हो सकता। इतना होते हुए भी उस अद्वैत का परिणाम सेवारूप में होना चाहिए था, वह भारत में हुआ नहीं और सेवावृत्ति प्रधानतया ख्रिस्ती धर्म में प्रकट हुई। आधुनिक जमाने में विवेकानंद ने अद्वैत को सेवा के साथ जोड़ दिया और गांधीजी ने उसको आगे चलाया। विवेकानंद परदेश में और हिन्दुस्तान में भी बहुत घूमे थे। उन्होंने जगह-जगह देखा कि मिशनरी लोग सेवा करते हैं, हिन्दू और मुसलमान लोग वैसी सेवा नहीं करते हैं। जब उन्होंने यह देखा, तब लोगों के सामने यह बात स्पष्ट की कि हमारा सिद्धांत अद्वैत है और जहां हम सिद्धांत में अद्वैत तक पहुंचे हैं, वहां हमको सेवा करनी चाहिए। इसलिए उन्होंने जगह-जगह सेवा के मिशन भी खोल दिये।

हिन्दूधर्म से अद्वैत अर्वाचीन

सवाल यह है कि सेवा की उपेक्षा हुई, इसका कारण क्या? यह बहुत सोचने का मुद्दा है। दूसरे धर्मों का इतिहास देखें, तो वह दो-ढाई हजार सालों का है। इस्लाम 1300 साल का है, ख्रिस्ती धर्म दो हजार साल का और बाकी दूसरे धर्म भी दो-ढाई हजार साल के अंदर के हैं। लेकिन हिन्दूधर्म, जहां तक हम समझते हैं, कम से कम बीस हजार साल का है। वेद को प्रमाण मानें तो वेद का जो पुरातन हिस्सा है, वह बीस हजार साल से अर्वाचीन नहीं। गृत्समद ऋषि पर मैंने एक लेख लिखा है, उसमें इस बात का जिक्र है। बीस हजार साल का इतिहास! बीस हजार साल की परंपरा में अनेक अनुभव आये, अनेक परिवर्तन हुए। उस हालत में हिन्दूधर्म का आखिरी रूप कौन-सा, बीच का रूप कौन-सा, और पहला रूप कौन-सा, यह सब सोचने की बात हो जाती है।

अद्वैत आदि जो सिद्धांत आये, वे शंकराचार्य, रामानुजाचार्य के बाद आये। यानी 1200-1300 साल पहले की बात समझ लीजिए। 20 हजार साल के इतिहास के सामने 1200-1300 साल की बात छोटी हो जाती है। शंकर, रामानुज आये, उन्होंने पदयात्रा करके हिन्दूधर्म पर जो हमला हो रहा था, वह हटाया। हमला यह था कि हिन्दूधर्म के अनेक ग्रंथ थे, उनमें मेल-मिलाप नहीं था। उपनिषद और दूसरे ग्रंथों में मेल नहीं था, और उपनिषद के अंदर भी परस्पर भेद था। वह सारा इकट्ठा करके उन्होंने समन्वय किया। आज भी समन्वय की

जरूरत है, लेकिन वह अनेक धर्मों के समन्वय की है। उन्होंने जो समन्वय किया, वह हिन्दूधर्म के अंदर जो बेमेल था, मतभेद था, अनेक ग्रंथ थे, भेद थे, जिसमें हिन्दूधर्म टूटने को आया था, उनका समन्वय किया। लेकिन वह घटना सारी 1200-1300 साल के अंदर की है।

पुत्रोऽहं पृथिव्याः दूसरा सवाल है, *हिन्दूधर्म राष्ट्रीय भावना क्यों नहीं पनपा सका? जैसे हिन्दूधर्म अति पुरातन है, और इस वास्ते उसकी अनेक फेजेस (अवस्थाएं) हुईं; वह विकसित होता गया, बढ़ता गया, वैसे जिसको हम आज हिन्दू-राष्ट्र मानते हैं, पुराने जमाने में वह विशाल खंडप्राय था। एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना संभव नहीं था। उस हालत में भारत में एक राष्ट्रीयता कैसे आयेगी?*

भारत में एक राष्ट्रीयता की जगह एक-विश्वता थी। ऋषियों का दर्शन था *विश्वमानुषः*। उस समय *दुर्लभं भारते जन्म* नहीं था। वह तो आधुनिक है, बाद में आया है। अथर्ववेद में तो पृथ्वीसूक्त आया है। *पुत्रोऽहं पृथिव्याः*—हम पृथ्वी के पुत्र हैं। *नाना धर्माणां पृथ्वीं विवाचसं*—जिस पृथ्वी में अनेक धर्म हैं, अनेक वाणियां-भाषाएं हैं, उस पृथ्वी की हम वंदना करते हैं। यह भावना थी; लेकिन आज हम जिसको भारत कहते हैं, वह उन दिनों मालूम भी नहीं था। उस जमाने में इधर से उधर जाना भी मुश्किल था। बीच में बड़े-बड़े अरण्य पड़े थे। इस वास्ते भारत नाम का देश उनको मालूम नहीं था। लेकिन विशाल विश्व की कल्पना उनको थी। हम एक विश्व के मानुष हैं यह भावना थी। लेकिन इस कल्पना के प्रचार के लायक विज्ञान आया नहीं था। आज जैसे विज्ञान की मदद से इधर की संवेदना तुरंत उधर पहुंचती है, वैसी विज्ञान की मदद उस जमाने में नहीं थी। ऋषियों के चिन्तन की वह विशेषता थी, जिस कारण विश्व-मानुषता आयी और हम पृथ्वी के हैं, यह भाषा निकली। वह ऋषियों की प्रतिभा थी। इस वास्ते भारत पर बाहर से जो हमले हुए, वे एक देश पर हुए ऐसे कहना ऐतिहासिक नहीं। यद्यपि इसमें कोई शक नहीं कि लगभग एक-डेढ़ हजार साल हुए भारत एक माना गया, रामेश्वर से काशी तक। डेढ़ हजार साल से भारत एक है यह कल्पना दीखती है।

राष्ट्रीयता नहीं, आंतरराष्ट्रीयता

कोई भी पूछ सकता है कि राजपूतों के साथ मराठों की लड़ाई सिविल वॉर (गृहयुद्ध) कहलायी जाती है और फ्रांस के साथ इंग्लैंड की लड़ाई इंटर-नेशनल वॉर (अंतर्राष्ट्रीय युद्ध) कहलायी जाती है, वह कैसे? इंग्लैंड और फ्रांस में अंतर भी कितना है? सोचने की बात है। इतना बड़ा विशाल देश था, एक प्रांत से दूसरे प्रांत में इतना अंतर था, परस्पर कोई संपर्क नहीं था, ऐसी हालत में भारत में जो लड़ाइयां हुईं, वे सिविल वॉर नहीं थीं। लेकिन उनको सिविल वॉर कहते हैं, इसका अर्थ क्या? इसका अर्थ यह है कि भारत ने अपना इतना विशाल बड़ा देश माना। इस वास्ते हम कहते हैं कि योरप को भारत से समाजशास्त्र सीखना बाकी है, जिससे कि योरप एक हो जाये और कम से कम एकत्र व्यापार करे। वहां तो एक-एक भाषा के एक-एक राष्ट्र बने हैं और केवल व्यापार के लिए भी इकट्ठा आ नहीं सकते हैं। यह सारा देखते हैं, तो समझ में आता है कि भारत की 'राष्ट्रीयता' 'आंतरराष्ट्रीयता' के बराबर की है। इसलिए वह बनने में देर लगी।

एक विश्व की भावना होते हुए भी विज्ञान के अभाव के कारण भारत की एकता टिकी नहीं। आज सेना रखने का अधिकार केन्द्र को है, अलग-अलग प्रांतों को नहीं है। वैसी स्थिति उस समय नहीं थी। अलग-अलग राज्यों की अलग-अलग सेनाएं थीं। छोटी-छोटी सेनाएं आपस में लड़ती भी थीं। इस तरह सब चलता था। इस वास्ते जिसको हम राष्ट्रीयता कहते हैं, वह आधुनिक जमाने की है। प्राचीन जमाने में राष्ट्रीयता का सवाल उठता ही नहीं था। हम विश्व के हैं, यह भावना थी। मनु महाराज ने भी यह लिख रखा है—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशाढ़गजन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व-मानवाः

इस देश के श्रेष्ठ पुरुषों के द्वारा दुनिया के मानव अपने-अपने चरित्र की शिक्षा लेंगे। 'पृथिव्याम्'! मनु के सामने भी पृथ्वी आती है। विशाल ध्येय रखने के कारण जो नुकसान होता है, वह भारत को हुआ। छोटा ध्येय रखा होता, तो नुकसान नहीं होता। छोटे-छोटे राष्ट्र माने होते, तो बचाव होता। लेकिन व्यापक ध्येय माना और व्यापक बनने के लिए जिस विज्ञान की जरूरत थी, वह उपलब्ध नहीं था; इस वास्ते अति व्यापक ध्येय के कारण भारत हारा। भारत संकुचित विचार करता, एक-एक राष्ट्र अलग माना जाता, तो वे राष्ट्र स्वतंत्र होते और भारत बचता।

वर्ण-व्यवस्था=श्रमव्यवस्था

जहां तक सेवा का ताल्लुक है, वर्ण-व्यवस्था सेवा का उत्तम साधन माना गया था। वह टूटी और उसकी जगह जाति-व्यवस्था आ गयी। जाति-व्यवस्था यानी ऊंच-नीच भावना। वर्ण व्यवस्था में वह नहीं था। वहां सबको समान वेतन माना गया था। यानी आर्थिक क्षेत्र में समानता थी। सब कामों की समान प्रतिष्ठा मानी गयी थी। यानी सामाजिक क्षेत्र में समानता थी। और सब कर्मों के द्वारा समान मुक्ति मानी गयी थी। यानी आध्यात्मिक क्षेत्र में समानता थी। चातुर्वर्ण्य में आर्थिक, सामाजिक, आध्यात्मिक प्रतिष्ठा समान थी, इसलिए हमने लिख भी रखा है—

श्रमाची व्यवस्था म्हणजे वर्ण-निष्ठा
श्रमाची अनास्था वर्गभेद

—यदि निरपवाद रूप से श्रमनिष्ठा को अपनाते हैं, तो ऊंच-नीच भेद मिट जायेगा। वर्गभेद, क्लास वॉर वगैरह श्रम की अनास्था के कारण होता है। कुछ लोग श्रम करना नहीं चाहते, वे श्रम करते नहीं। कुछ लोग लाचारी से करते हैं, उनको श्रम करना पड़ता है। फिर उनके बीच भेद उत्पन्न होते हैं। प्राचीन वर्णव्यवस्था थी, उसमें सेवा-कार्य के लिए स्वतंत्र वर्ग निर्माण किया था शूद्रवर्ग। शूद्र का काम क्या था? सबकी सेवा करना। चारों ओर घूमते रहना, देखते रहना और जहां जरूरत हो वहां सेवा करना।

बात ऐसी है कि घर में ही कोई बीमार हो तो उसकी सेवा करने का काम घर वाले कर लेंगे। लेकिन मान लीजिए कि कोई लड़का अंधा है, उसको संभालने वाला कोई

नहीं तो उस हालत में कौन सेवा करेगा? उस हालत में, ग्राम-सभा होगी वह शूद्रों के द्वारा उसकी सेवा करेगी। प्राचीन काल में इस प्रकार से सेवा चलती होगी। लेकिन जब जातिभेद आया, शूद्र नीचे माने गये—यह भी चार-पांच हजार साल पुराना है—तबसे इस प्रकार की सेवा नीच सेवा मानी गयी। तब वर्णव्यवस्था टूट गयी। उसकी जगह दूसरी कोई व्यवस्था आया नहीं। जाति-अभिमान आ गया। उसके कारण सेवा तो टूट हो गयी, राष्ट्ररक्षा क भार उठाने वाला भी कोई न रहा। उसके पहले थोड़े लोग यानी क्षत्रिय लोग राष्ट्ररक्षा करते थे, वह भी रहा नहीं। भारत जो हारा है, वह वर्णव्यवस्था टूट गयी, उसके कारण हारा है। लेकिन वह एक कारण है।

बारूद गीली निकली : मुख्य कारण भारत में साइंस नहीं था। प्लासी की लड़ाई जहां हुई थी, वह जगह मैं देख आया हूं। बड़ी सहजता से वहां का ग्रामदान हो गया। पंडित नेहरू को जब यह पता चला, तब उन्हें मिल्टन याद आ गया। उन्होंने जाहिर व्याख्यान में कहा—''प्लासी लॉस्ट एण्ड प्लासी रिगेंड'' (प्लासी खोयी, प्लासी पायी)। प्लासी यानी हमारा बिलकुल कमनसीब और देश की बदनामी! उसका ग्रामदान हुआ सुनकर उनको बहुत आनंद हुआ।

मैं वहां केवल ग्रामदान के लिए ही नहीं गया था। मैंने वहां प्लासी का रणांगण देखा। क्लाईव कहां खड़ा था, नवाब की सेनाएं कहां खड़ी थीं, सब देखा। क्लाईव ने 22 जुलाई को हमला किया था। उस समय आर्द्रा नक्षत्र रहता है। यानी जोरदार बारिश रहती है। क्लाईव की सेना पेड़ों के नीचे खड़ी थी। सामने दोनों नवाबों की सेनाएं थीं। दोनों एक हो जाते, तो 60-70 हजार की सेना हो जाती। लेकिन वे अलग-अलग थे, इसलिए एक-एक की तीस-पैंतीस हजार की सेना थी। क्लाईव की बंदूकों को दूरबीनें थीं। ताक-ताक पर गोलियां मार सकते थे। इनको तो दूरबीन नाम की चीज ही मालूम नहीं थी! उसमें भी नवाबों की बारूद बारिश के कारण सब गीली हो गयी थी। अंग्रेजों की बारूद सुरक्षित, टारपोलीन से ढंग कर रखी हुई थी। चंद घंटों में लड़ाई समाप्त हुई और बंगाल हारा।

चार कारण : अंग्रेजों की जो जीत हुई, वह सामान्यतः विज्ञान के कारण हुई। राजवाड़े (इतिहास संशोधक) ने हमारा ध्यान इधर खींचा है। पेशवे के पास सखारामबापू उनके मंत्री थे। उनकी अच्छी लायब्रेरी थी। उसमें सब हस्तलिखित पोथियां ही थीं। लेकिन उन किताबों में एक अंग्रेजी प्रिंटेड किताब भी मिली है। राजवाड़े लिखते हैं कि वह छपी हुई किताब देखकर भी उन लोगों को जिज्ञासा नहीं हुई कि यह क्या चीज है जान लें, सीख लें। उनकी जिज्ञासा-बुद्धि ही मर गयी थी, ऐसा आक्षेप राजवाड़े ने किया है। जो भी हो! लेकिन साइंस का जो नया दौर निकला था, उसका हिन्दुस्तान में अभाव था। हम हारे, वह मुख्यतः साइंस के इस अभाव के कारण।

आपस-आपस में मतभेद था, वह भी एक कारण है, लेकिन वह छोटा कारण है। यहां का व्यापारी वर्ग, सारा का सारा लूटने के सिवा और कुछ काम नहीं करता था, इसलिए व्यापारियों के लिए समाज में नफरत थी। इस वास्ते क्लाईव वगैरह आये, तब यहां का सारा व्यापार एकदम हाथ में ले सके।

भारत हारा इसके कारण, नंबर एक, व्यापारियों के लिए नफरत; नंबर दो, आम जनता की तटस्थता; नंबर तीन, इंग्लिश लोगों का साइंस; नंबर चार, भिन्न-भिन्न राज्य बने थे, उनकी आपस-आपस में लड़ाइयां।

संतों ने बचाया : यह इतिहास आपके सामने इसलिए रखा कि सारी परिस्थिति ध्यान में आ जाये। बीच के जमाने में हिन्दूधर्म बिलकुल हार गया था। उसको लगभग डेढ़ हजार साल हुए। बीच में संतों ने उसको जगाने की जोरदार कोशिश की। लेकिन वह क्या थी? **चोराच्या हातातील लंगोटी।** सभी जा रहा है, तो कम से कम लंगोटी तो रहे पास में! तो संतों ने भक्तिभाव रखो, यही कहा। भक्तिभाव रखो का मतलब क्या? उसको मैंने नाम दिया है 'मिनिमम धर्म', किमान धर्म। कम से कम श्रद्धा, भक्ति तो रख सकते हैं, नाम स्मरण तो कर सकते हैं। सभी खो गया है, तो जो रहा है थोड़ा, उसको पकड़े रहो। तो उस भक्ति के आधार से संतों के नीचे के वर्गों का उत्थान किया। हिन्दूधर्म का कम से कम माद्दा अपने हाथ में लेकर संतों ने भक्तिभाव प्रसारित किया। बाकी, ज्ञान की, कर्मयोग की बातें काहे करें, वह होने वाला नहीं, तो थोड़ा दान करो हाथ से और नामस्मरण करो, यह शिक्षा दी। संतों ने यह जो काम किया, वह बहुत बड़ा काम माना जायेगा। जहां सारा डूब रहा था, वहां उन्होंने थोड़ा बचाया। ❑

शराब मुक्त भारत सम्मेलन संपन्न

'शराब मुक्त भारत' राष्ट्रीय सम्मेलन 30 जनवरी, 2018 को भुवनेश्वर (ओडिशा) में संपन्न हुआ। सम्मेलन का नेतृत्व ओडिशा के साथ रमाकांत मंडल, अ. भा. नशाबंदी परिषद के महामंत्री महावीर त्यागी, सर्व सेवा संघ के पूर्व मंत्री विजय कुमार, बिहार प्रदेश नशाबंदी परिषद के अध्यक्ष चन्द्रभूषण, बिहार सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष कालिका सिंह, लोकसमिति के उषा, सीमा, उत्तर प्रदेश के सुल्तान सिंह आदि ने किया।

सम्मेलन में बिहार की तर्ज पर पूरे भारत में शराब मुक्त देश का निर्माण करने का संकल्प लिया गया। पूर्ण शराबबंदी, धर्म, नैतिकता, भारतीय संस्कृति और गरीब जनता के व्यापक हित और संविधान को प्रतिष्ठा देना ही पहला कदम है, ऐसा माना गया। सम्मेलन में करीब 10 हजार महिलाओं एवं पुरुषों ने एकजुटता का प्रदर्शन करते हुए ओडिशा सरकार से तत्काल शराब की बिक्री पर रोक लगाने की मांग की और कहा कि शराब के कारण ही बिहार की अपेक्षा ओडिशा में सड़क दुर्घटना, महिला अत्याचार, हिंसा आदि ज्यादा है। शराब से पैसे के विकास की बात बेईमानी है।

सम्मेलन में पूरे देश में नशाबंदी के लिए कार्य कर रहे सभी संगठनों को एक मंच पर लाने के लिए एक कमेटी का गठन किया गया, जिसकी अगली बैठक अप्रैल 2018 में दिल्ली में होगी। सम्मेलन में दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, झारखंड, बिहार, बंगाल, ओडिशा आदि राज्यों के प्रतिनिधियों ने भाग लेकर शराब मुक्त भारत बनाने का अवाहन किया। **–चंद्रभूषण**

28 फरवरी : राजेन्द्र बाबू पुण्य-तिथि

...और मुकदमा उठा लिया गया!

❑ डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

एक था चंपारण का आंदोलन...और एक थी महात्मा गांधी की मन व हृदय में प्रवेश की यात्रा! वह अद्‌भुत थी, और फूल की पंखुड़ियों की तरह एक-एक कर खुल रही थी...चंपारण मं गांधी के साथ की कहानी राजेन्द्र बाबू की जुबानी। –सं.

हम मुजफ्फरपुर में थे! संध्या समय महात्माजी निकट के एक ग्राम में गये। वहां के लोगों की दशा देखी, छोटे-छोटे बालकों और स्त्रियों से बातें कीं और चलते-चलते कहा कि जब इन लोगों की दशा सुधरेगी, तभी भारतवर्ष का स्वराज होगा! संध्या की गाड़ी से बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद, बाबू धरणीधर वकील के साथ दरभंगा से पहुंचे। निश्चय हुआ कि बाबू धरणीधर और बाबू रामनवमी प्रसाद महात्माजी के साथ चंपारण जायेंगे। रात के समय महात्माजी ने जो बातें कहीं, उनसे लोगों का साहस तथा उत्साह और बढ़ गया। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका का हाल सुनाया कि किस प्रकार एक आदमी के जेल जाने पर दूसरा आदमी और उसके बाद तीसरा आदमी उस काम को जारी रखता ही था। उन्होंने कहा : मैं चाहता हूं कि इसी प्रकार यहां भी काम किया जाये, 'मैं जानता हूं कि ये लोग मुझसे बुरे तौर से पेश आयेंगे, गिरफ्तारी का वारंट किसी भी समय आ सकता है। इसीलिए मैं चाहता हूं कि जितना शीघ्र हो, मैं चंपारण चला जाऊं और मेरे विरुद्ध जो कार्रवाइयां हों, चंपारण के रैयतों के सामने ही हों। मैं जानता हूं कि अभी हमारे पास इस प्रकार के आदमी नहीं हैं। अभी जो साथ रहेंगे, उन्हें क्लर्क का काम ही करना होगा।'

महात्माजी, बाबू रामनवमी प्रसाद और बाबू गोरख प्रसाद एक साथ दोपहर की गाड़ी से मोतीहारी रवाना हुए। महात्माजी यहीं से गिरफ्तारी के वारंट की राह जोहते थे। उन्होंने आवश्यक वस्तुएं साथ रखीं और बाकी सब चीजों को अलग बक्सों में रखवा दिया। मुजफ्फरपुर स्टेशन पर महात्माजी को पहुंचाने बहुत सज्जन आये थे। रास्ते भर भी प्रायः सभी स्टेशनों पर महात्माजी के जाने की खबर पाकर बहुत रैयत आ जुटे थे। महात्माजी 3 बजे मोतीहारी पहुंचे। सीधे बाबू गोरख प्रसाद के मकान पर जा ठहरे। उनके आने का समाचार शहर भर में तुरंत फैल गया। वहां बड़ी भीड़ जुट गयी। कई सरकारी कर्मचारी भी महात्माजी के दर्शनार्थ आये, पर पुलिस की गंध पाकर दूर से ही प्रणाम कर चले गये। महात्माजी ने निश्चय सुनाया कि कल 16 अप्रैल 1917 को जसौलीपट्टी गांव में, जहां से एक प्रतिष्ठित गृहस्थ पर अत्याचार की सूचना मिली थी, जाना है। दूसरे गांवों के रैयतों से कह दिया गया कि उनके बयान मंगलवार को जसौलीपट्टी से लौटने के बाद लिखे जायेंगे।

सुबह जसौलीपट्टी जाने की तैयारी हुई। महात्माजी, बाबू धरणीधर तथा बाबू रामनवमी प्रसाद हाथी पर सवार होकर 9 बजे रवाना हुए। बैसाख का महीना था। धूप कड़ी थी, पछुआ हवा भी जोरों से बह रही थी। बाहर निकलते ही देह झुलस जाती थी। महात्माजी को हाथी पर चढ़ने का अभ्यास नहीं था; और उस पर भी एक हाथी पर तीन आदमी! तुर्रा यह भी कि पछुआ हवा और धूल की वृष्टि! पर महात्माजी की धुन के सामने धूप और धूल क्या कर सकते थे। रास्ते में बहुत तरह की बातें होती जा रही थीं। बिहार में पर्दा के संबंध में भी बातें छिड़ गयीं और महात्माजी ने कहा कि मेरा यह विचार नहीं है कि हमारी स्त्रियां अंग्रेजी तौर-तरीकों को ग्रहण करें, पर हमको यह समझना चाहिए कि इस कुप्रथा से उनके स्वास्थ्य को कितनी हानि पहुंचती है! इस प्रथा के कारण वे अपने स्वामी की कोई सहायता नहीं कर पातीं। बातें करते-करते वे लोग मोतीहारी से नौ मील की दूरी पर एक बस्ती चंद्रहिया 12 बजे दोपहर में पहुंचे। महात्माजी की इच्छा हुई कि इस गांव की प्रजा का हाल देख लिया जाये। पूछने पर मालूम हुआ कि गांव मोतीहारी कोठी का है और रहने वाले अधिकतर मजदूरी किया करते हैं। इसलिए इस समय सब कोठी में काम करने चले गये हैं एक आदमी से भेंट हुई, जिसने वहां की हालत कह सुनायी और बताया कि हम लोगों के साहब के सामने कलेक्टर की क्या मजाल, जो कुछ कर सके। बातें हो ही रही थीं कि इतने में कोई आदमी सादे लिबास में पांव गाड़ी पर आता दिख पड़ा। नजदीक आया तो मालूम हुआ कि यह पुलिस दरोगा है। उन्होंने महात्माजी से कहा कि कलेक्टर साहबने आपको सलाम दिया है। महात्माजी ने उनसे किसी सवारी का प्रबंध करने के लिए कहा और अपने साथियों से बोले कि मैं तो जानता था कि कोई ऐसी घटना अवश्य होगी। आप इसकी चिन्ता न करें। आप लोग जसौलीपट्टी जाइए और अपना काम कीजिए। यदि आवश्यकता हो, तो आज रात को ठहर जाइयेगा। दरोगाजी एक बैलगाड़ी खोज लाये और महात्माजी बैलगाड़ी पर उनके साथ मोतीहारी की तरफ रवाना हुए।

रास्ते में महात्माजी को एक इक्का मिला। दरोगाजी के कहने पर महात्माजी बैलगाड़ी छोड़ इक्के पर सवार हो गये। कुछ दूर और आगे जाने पर एक पुलिस अफसर टमटम पर आता दिखायी दिया। दरोगा ने इक्का रोका और महात्माजी को टमटम पर सवार कराया। टमटम पर आये सज्जन पुलिस के डिप्टी सुपरिंटेंडेंट थे। कुछ दूर जाकर उन्होंने टमटम खड़ा किया और महात्माजी से कहा कि आपके लिए एक नोटिस है। महात्माजी ने शांत भाव से नोटिस पढ़ लिया और मोतीहारी पहुंचकर उसकी रसीद लिख दी। नोटिस का मजमून यह था कि 'इस जिले के किसी भी हिस्से में आपकी उपस्थिति से अशांति का, जिसमें जान भी जा सकती है, खतरा है। इसलिए तत्काल कदम उठाना जरूरी है और इसलिए आपको आदेश दिया जाता है कि अगली उपलब्ध ट्रेन से ही आप इस जिले से बाहर चले जायें।'

नोटिस के उत्तर में महात्माजी ने मजिस्ट्रेट को तुरंत जवाब भेज दिया : ''144 धारा की नोटिस के उत्तर में मुझे यही निवेदन करना है कि मुझे खेद है कि आपको इस तरह की नोटिस जारी करने की जरूरत पड़ी। मुझे इस बात का भी खेद है कि डिवीजन के कमिश्नर ने मेरी स्थिति को बिलकुल गलत समझा। सर्वसाधारण के प्रति जो मेरा कर्तव्य है, उसका ध्यान देखते हुए मैं इस जिले को छोड़ नहीं सकता हूं। यदि सरकारी कर्मचारियों की ऐसी राय हो तो इस आज्ञा के उल्लंघन के लिए जो भी दंड हो, उसे सहन करने के लिए मैं तैयार हूं। कमिश्नर की इस बात का कि मेरा उद्देश्य आंदोलन मचाना है, मैं जोर से विरोध करता हूं। मेरी इच्छा केवल असली स्थिति जानने की है और जब तक मैं स्वतंत्र रहूंगा, इस इच्छा को पूरी करता ही जाऊंगा।''

महात्माजी ने इसी के साथ इसकी जानकारी मि. एच. एस. पोलक, माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय, मुझे तथा भारतवर्ष के कई नेताओं को तार द्वारा भिजवाई। मि. सी. एफ. एंड्रूज को तुरंत चले आने का तार दिया गया। फिर महात्माजी ने एक नियमावली उन लोगों के लिए लिखकर तैयार कर दी, जो उनके बाद इस काम को चलाने वाले थे।

उधर बाबू धरणीधर और बाबू रामनवमी प्रसाद जसौलीपट्टी दो बजे पहुंचे। उनके पहुंचते-पहुंचते एक दूसरे दरोगा वहां पहुंच गये। ये किसी समय में बाबू धरणीधर के छात्र और बाबू रामनवमी प्रसाद के सहपाठी थे। फिर भी उन्होंने असली बात को छिपाना अपना धर्म समझा। पूछने पर कहा कि हम एक दूसरे मुकदमे के सिलसिले में यहां आये हुए हैं। आप लोगों का आना सुना तो मिलने चले आये। सच यह था कि महात्माजी के मोतीहारी पहुंच जाने पर अधिकारियों ने उन्हें इनके पीछे भेजा था। उन्होंने इन्हें सलाह भी दी कि आप लोगों का इस काम में पड़ना अच्छा नहीं हुआ। चार बजे के करीब ये लोग मोतीहारी लौट चले। रास्ते में धारा 144 की नोटिस की जानकारी उन्हें मिली। वे 10 बजे रात को मोतीहारी वापस आये तो महात्माजी ने उनसे बात की। अपनी बनायी नियमावली उन्हें दी और उनके जेल जाने के बाद किस प्रकार कार्य करना होगा, इसका ब्यौरा बतलाया फिर यह भी कहा कि यदि आप लोग मेरे पीछे जेल में आ जायेंगे, तो सब काम सफल हो जायेगा।

महात्माजी पर धारा 144 की नोटिस जारी करने की सूचना मोतीहारी के जिला मजिस्ट्रेट ने उसी दिन कमिश्नर के पास भेज दी।

16 अप्रैल 1917 को कमिश्नर ने एक लंबी रिपोर्ट बिहार सरकार के चीफ सेक्रेटरी को भेजी, जिसमें महात्मा गांधी को तिरहुत डिवीजन से बाहर करने के लिए हुकुम जारी करने का अनुरोध भी किया गया था। अगले दिन देहातों से लोगों को बुलाया गया था। बहुत-से रैयत आये और उनके इजहार लिखे जाने लगे। पुलिस के दरोगा भी आ जमे और जिनके इजहार लिखे जाते थे, उनके नाम पहले तो छिपाकर, फिर प्रत्यक्ष रूप से लिखने लगे। इतने रैयत आ पहुंचे थे कि लिखने वालों को दम मारने की फुर्सत नहीं थी। महात्माजी जान गये कि आज्ञा उल्लंघन के अपराध में उन्हें अवश्य जेल जाना होगा। इसलिए न काम में कोई कमी की गयी और न रैयतों को इसकी जानकारी दी गयी।

इधर तो ये सब तैयारियां हो रही थीं, उधर भारत भर से तार पर तार आ रहे थे। मि. पोलक ने प्रयाग से तार दिया कि मैं पटना आ रहा हूं। मजहरूल हक साहब ने पूछा कि आवश्यकता हो तो आऊं? मैंने भी पूछा कि मुझसे क्या सेवा हो सकती है? हक साहब को तार गया कि मेरे जेल जाने के बाद आपकी आवश्यकता होगी। मेरे पास तार आया कि आप स्वयंसेवकों के साथ शीघ्र चले आयें। मालवीयजी ने तार से पूछा : क्या हाल है? मैं हिन्दू विश्वविद्यालय का काम छोड़कर आ रहा हूं। उनको उत्तर दिया गया कि अभी आपे आने की आवश्यकता नहीं है। महात्माजी ने मोतीहारी के उदारचित्त पादरी जे. जेड. हौज साहब से भेंट की।

आज्ञा भंग के अभियोग का कोई सम्मन संध्या तक नहीं आया, तब महात्माजी ने जिला मजिस्ट्रेट के पास एक पत्र भेजा उन्होंने पत्र में अपने देहात जाने की सूचना दी और कहा कि हम कोई काम छिपाकर नहीं करना चाहते। यदि हमारे साथ कोई पुलिस अफसर आ सके, तो अच्छा होगा। इस पत्र के पाते ही मजिस्ट्रेट ने जवाब लिखा : कल धारा 188 के तहत आप पर अभियोग लगाया जायेगा और आपको सम्मन दिया जायेगा। इसलिए मैं आशा करता हूं कि आप मोतीहारी छोड़कर नहीं जायेंगे। पत्र पहुंचने के कुछ देर बाद ही सम्मन भी आ पहुंचा, जिसमें महात्माजी को 18 अप्रैल 1917 को

12 बजे सब-डिवीजन अफसर की कचहरी में उपस्थित होने की आज्ञा थी। महात्माजी ने उन लोगों से पूछा : मेरे जेल जाने के बाद आप लोग क्या करेंगे? प्रश्न जटिल था, उत्तर सहज नहीं था। सबसे कम उम्र के लेकिन उत्साह से भरे बाबू रामनवमी चुप रहे। बाबू धरणीधर ने कहा कि अभी मैं इतने के ही लिए तैयार हूं कि यदि आप जेल चले जायेंगे, तो मैं इस काम को जारी रखूंगा। यदि मुझ पर भी 144 धारा का नोटिस जारी होगा, तो मैं अपने स्थान पर दूसरे को रख यहां से चला जाऊंगा। इस प्रकार कम-से-कम कुछ दिनों तक यह काम चलता रहेगा। इन जवाबों से महात्माजी पूरे संतुष्ट नहीं हुए। वे चिट्ठियां लिखने बैठ गये। रात भर काम करते ही रह गये, सोये बिल्कुल नहीं। इस अद्‌भुत शक्ति से सभी चकित थे। रात में उन्होंने अदालत के सामने पढ़ने के लिए एक बयान तैयार किया। प्लांटर्स एसोसिएशन के मंत्री और कमिश्नर के नाम से भी एक पत्र तैयार किया, जिसमें तब तक रैयतों से जितनी शिकायतें मालूम हुई थीं, लिख दीं और उनके परिमार्जन का उपाय भी पूछा था। तथा दूसरे पत्रों को अपने जेल जाने के बाद भेजने की हिदायत दी उन्होंने।

मैंने पटना पहुंचकर सारे नेताओं से मुलाकात की और चंपारण का पूरा हाल, जो वे बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद से पहले ही सुन चुके थे, कह सुनाया। इसी बीच मि. पोलक का तार आया कि वे संध्या को पंजाब मेल से पहुंचेंगे। हम उन्हें स्टेशन से लिवा लाए। रात में ही एक छोटी-सी गोष्ठी हुई, जिसमें यह निश्चय हुआ कि मि. पोलक, मैं और जो जा सकें, कल 18 अप्रैल 1917 के सबेरे की गाड़ी से मोतीहारी चलें। बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद भी दूसरे दिन सबेरे पहुंच जायेंगे, ऐसी आशा थी।

18 अप्रैल 1917 चंपारण के इतिहास का ही नहीं, भारतवर्ष के वर्तमान इतिहास का एक खास दिन बन गया। सत्याग्रह का एक पवित्र पन्ना लिखा जाने वाला था। समस्त भारतवर्ष की आंखें खुलने वाली थीं। 'सांच को आंच नहीं'—यह पुरानी कहावत महात्मा गांधी चरितार्थ करने वाले थे। दुखियों के दुःखों को दूर करने के लिए कटिबद्ध परंतु दुःख देने वालों को तनिक भी हानि नहीं पहुंचाने की इच्छा महात्माजी की पवित्र आत्मा मानो मनुष्य रूप में इसीलिए अवतरित हुई है! क्या ऐसे महापुरुष के सम्मुख कोई बाधा ठहर सकती है?

बारह बजे तक महात्माजी ने उन सारी चीजों को, जिन्हें वे जेल में साथ ले जाना चाहते थे, एक जगह रखा, बाकी को दूसरी जगह रख दिया। 12 बजे वे बाबू धरणीधर और बाबू रामनवमी प्रसाद के साथ गाड़ी से कचहरी की ओर चले। रास्ते में बाबू धरणीधर ने महात्माजी से कहा : आपके जेल चले जाने के बाद चाहे और कोई कुछ करे या न करे, हम दोनों ने निश्चय किया है कि हम आपके पीछे जेल जायेंगे। यह सुनते ही महात्माजी प्रफुल्लित हो उठे और बड़े आह्लाद के साथ बोले, बस, अब काम बन गया!

यद्यपि धारा 144 की नोटिस तथा मुकदमे की बात रैयतों से कही नहीं गयी थी, तथापि बात शहर में ही नहीं, दूर-दूर के देहातों तक फैल गयी थी। हजारों रैयत सुबह दस बजे से ही कचहरी में आकर प्रतीक्षा कर रहे थे कि उनके उद्धार के लिए जेल जाने वाले महात्मा के दर्शन एक बार तो हो जायें! महात्माजी जब इजलास पर गये तब उनके पीछे-पछे लगभग 2000 मनुष्यों ने घुसने की कोशिश में कचहरी के दरवाजों के शीशे तोड़ डाले। हाकिम मि. जॉर्ज चंदर ने यह हाल देखा तो महात्माजी से कहा कि आप कुछ देर मुख्तारखाने में ठहरें, मैं फिर बुलवा लूंगा। महात्माजी मुख्तारखाने में गये। इसी बीच खबर देकर हाकिम ने शस्त्रधारी पुलिस बुलवा ली जिससे लोग फिर भीतर घुसने न पायें और काम में बाधा न पड़े। महात्माजी मुख्तारखाने में बैठे थे और दर्शकों की भीड़ लगी हुई थी। सब एकटक उनकी ओर देख रहे थे और कितनी ही आंखों से अविरल आंसू बह रहे थे।

महात्माजी फिर इजलास पर गये। सरकारी वकील अपनी किताबों के साथ पहले से ही तैयार थे। उन्होंने समझा था कि महात्मा गांधी जैसे एक बड़े आदमी पर यह मुकदमा चल रहा है और वे स्वयं नामी बैरिस्टर हैं तो बड़ी बहस की आवश्यकता होगी। इसी धुन में वे शायद रात-भर नजीरें ढूंढ़ते रहे। महात्माजी जैसे ही पहुंचे, हाकिम ने पूछा, 'आपका कोई वकील है?' महात्माजी : 'कोई नहीं।' सब चकित हो गये। सरकारी वकील ने अभियोग पढ़ सुनाया और कहा कि 144 धारा की नोटिस के अनुसार मि. गांधी को 16 अप्रैल 1917 को रात की गाड़ी से चंपारण छोड़ जाना चाहिए था, किन्तु वे अभी तक नहीं गये हैं। इसलिए उन पर 144 धारा के अनुसार अभियोग लगाया जाता है। महात्माजी ने कहा कि मैंने नोटिस पाने के बाद एक पत्र जिला मजिस्ट्रेट के पास भेज दिया था, जिसमें उस आज्ञा के उल्लंघन का कारण बताया था। उस पत्र को मिसिल में शामिल कर दिया जाये। मजिस्ट्रेट ने कहा कि वह पत्र यहां नहीं है। यदि आप उसकी जरूरत समझते हैं, तो दरख्वास्त दीजिए। इसके बाद महात्मा गांधी ने अपने बयान को बहुत शांत किन्तु दृढ़ भाव से पढ़ सुनाया। जिस समय वे उसे पढ़ रहे थे, कचहरी इतने आदमियों से भरी हुई थी कि गिनना संभव नहीं था फिर भी प्रगाढ़ निस्तब्धता छायी रही। सब एकटक महात्माजी की ओर देख रहे थे। जैसे-जैसे वे आगे पढ़ते जाते थे, लोगों के चेहरे पर आश्चर्य और प्रेम के भाव प्रकट होते जाते थे। बयान यही था :

''अदालत की आज्ञा से में संक्षेप में यह बतलाना चाहता हूं कि नोटिस द्वारा जो मुझे आज्ञा दी गयी उसकी अवज्ञा मैंने क्यों की। मेरी समझ में यह स्थानीय अधिकारियों और

मेरे मध्य में मतभेद का प्रश्न है। मैं इस राष्ट्र की तथा मानव-सेवा के विचार से आया हूं। यहां आकर उन रैयतों की सहायता करने के लिए, जिनके साथ कहा जाता है कि नीलवर साहब अच्छा व्यवहार नहीं करते, मुझसे बहुत आग्रह किया गया। पर जब तक मैं सब बातें अच्छी तरह न जान लेता, तब तक उन लोगों की कोई सहायता नहीं कर सकता था। इसलिए मैं, यदि हो सके, तो अधिकारियों और नीलवरों की सहायता से, सब बातें जानने आया हूं। किसी दूसरे उद्देश्य से मैं यहां नहीं आया हूं। मुझे यह विश्वास नहीं होता कि मेरे यहां आने से किसी प्रकार शांति भंग या प्राणहानि हो सकती है। मैं कह सकता हूं कि ऐसी बातों का मुझे बहुत कुछ अनुभव है। अधिकारियों को जो कठिनाइयां होती हैं, उनको मैं समझता हूं और मैं यह भी मानता हूं कि उन्हें जो सूचना मिलती है, वे केवल उसी के अनुसार काम कर सकते हैं। कानून मानने वाले व्यक्ति की तरह मेरी प्रवृत्ति यही होनी चाहिए थी और ऐसी प्रवृत्ति हुई भी कि मैं इस आज्ञा का पालन करूं। पर मैं उन लोगों के प्रति, जिनके कारण मैं यहां आया हूं, अपने कर्तव्य का उल्लंघन नहीं कर सकता था। मैं समझता हूं कि मैं उन लोगों के बीच में रहकर ही उनकी भलाई कर सकता हूं। इस कारण, मैं स्वेच्छा से इस स्थान से नहीं जा सकता था।

दो कर्तव्यों के परस्पर विरोध की दशा में मैं केवल यही कर सकता था कि अपने हटाने की सारी जिम्मेवारी शासकों पर छोड़ दूं। मैं भलीभांति जानता हूं कि मैं उन लोगों के बीच रहकर ही उनकी भलाई कर सकता हूं। इस कारण, मैं स्वेच्छा से इस स्थान से नहीं जा सकता था। मैं भलीभांति जानता हूं कि भारत के सार्वजनिक जीवन में मेरी जैसी स्थिति वाले लोगों को आदर्श उपस्थित करने में बहुत ही सचेत रहना पड़ता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि जिस स्थिति में मैं हूं, उस स्थिति में प्रत्येक प्रतिष्ठित व्यक्ति वही करेगा, जो इस समय मैंने निश्चय किया है। मेरा निश्चय यह है कि बिना किसी प्रकार का विरोध किये मैं आज्ञा न मानने का दंड सहने के लिए तैयार हो जाऊं। मैंने यह बयान इसलिए नहीं दिया है कि जो दंड मुझे मिलने वाला है, वह कम किया जाये। मैं केवल यह दिखलाने की कोशिश कर रहा हूं कि मैंने सरकारी आज्ञा की अवज्ञा किस कारण की। ऐसा नहीं है कि मुझे सरकार के प्रति श्रद्धा नहीं है, बल्कि इस कारण से कि मैंने उससे भी उच्चतर आज्ञा का अपनी विवेक बुद्धि की आज्ञा का पालन करना उचित समझा है।''

अदालत को भी तथा सरकारी वकीलों को भी विश्वास था कि महात्माजी कुछ सफाई देंगे। पर इस बयान को सुनकर अदालत थर्रा गयी और मजिस्ट्रेट की समझ में यह नहीं आया कि वे अब क्या करें! उन्होंने महात्माजी से बार-बार पूछा कि आप अपराध स्वीकार करते हैं या नहीं? महात्माजी ने उत्तर दिया कि मुझे जो कहना था, मैंने अपने बयान में कह दिया है। इस पर हाकिम ने कहा कि उसमें अपराध का साफ इकरार नहीं है। महात्माजी ने कहा कि मैं अदालत का अधिक समय नष्ट करना नहीं चाहता, मैं अपराध स्वीकार कर लेता हूं। हाकिम और भी घबरा गये। उन्होंने महात्माजी से कहा कि यदि आप अब भी जिला छोड़कर चले जायें और न आने का वादा करें, तो हम यह मुकदमा उठा लेंगे। महात्माजी ने उत्तर दिया, ''यह नहीं हो सकता। इस समय की क्या बात है, जेल से निकलने पर मैं चंपारण में ही अपना घर बना लूंगा।'' हाकिम अवाक रह गये। उन्होंने कहा, इस विषय में विचार करने के लिए कुछ समय की आवश्यकता है। आप 3 बजे यहां आइये, तो मैं हुक्म सुनाऊंगा। ये सारी बातें आधे घंटे के भीतर ही समाप्त हो गयीं। महात्माजी वापस जाने के लिए तैयार हुए ही थे कि पुलिस के डिप्टी सुपरिंटेंडेंट ने आकर कहा कि आपसे सुपरिंटेंडेंट मिलना चाहते हैं। महात्माजी उनके साथ सुपरिंटेंडेंट के पास गये। वे किसी समय दक्षिण अफ्रीका में रह चुके थे। उन्होंने महात्माजी को दक्षिण अफ्रीका का मुलाकाती बताकर उनसे बहुत बातें कीं। उन्होंने राजकुमार शुक्ल की बहुत शिकायत की और कोठी वालों से महात्माजी की मुलाकात कराने का वादा किया। फिर महात्माजी जिला मजिस्ट्रेट मि. डब्ल्यू. बी. हिकॉक से मिले। उन्होंने इस कार्रवाई पर खेद प्रकट किया और कहा कि आपको पहले मुझसे मिलना चाहिए था। महात्माजी ने कहा जब मैं कमिश्नर से मिला था, तब उन्होंने मेरे साथ जैसा बरताव किया, उसके बाद मेरे लिए कैसे उचित था कि मैं आपसे मिलूं! मजिस्ट्रेट ने महात्माजी से तीन दिन तक देहातों में जाना बंद करने के लिए कहा और महात्माजी ने उनकी यह बात मान ली।

तीन बजे के कुछ पहले ही महात्माजी मजिस्ट्रेट के इजलास में पहुंच गये। मजिस्ट्रेट ने कहा कि मैं 21 अप्रैल 1917 को हुक्म सुनाऊंगा और तब तक आप 100 रुपये की जमानत दे दीजिए। महात्माजी ने उत्तर दिया : 'मेरे पास कोई जमानतदार नहीं है और न मैं जमानत ही दे सकता हूं।' फिर मुश्किल पड़ी! अंत में मजिस्ट्रेट ने उनसे स्वयं मुचलका लेकर जाने की आज्ञा दी। महात्माजी तीन बजे के लगभग डेरे पर लौट आये। आज की कार्रवाई की सूचना सब मित्रों को पत्रों द्वारा भेजी गयी। सबसे अनुरोध किया कि जब तक सरकारी आज्ञा न मालूम हो जाये, किसी प्रकार का आंदोलन नहीं होना चाहिए।

यह प्रश्न सब तरफ था कि महात्माजी के जेल जाने के बाद क्या होगा? काम तो जारी रखना ही होगा, पर जेल की नौबत आयी, तो क्या किया जायेगा? बाबू धरणीधर तथा बाबू रामनवमी का निश्चय सुनकर दूसरों का साहस भी बढ़ गया और एक स्वर से सभी ने कहा कि आवश्यकता पड़ने पर हम भी पीछे नहीं हटेंगे। महात्माजी को जब यह बतलाया गया तो वे आनंद से गदगद हो गये। तय हुआ कि यदि महात्माजी जेल चले

जायें तो हक साहब, बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद इस अभियान के नेता बनें और इसकी सूचना सरकारी कर्मचारियों को दे दें। यदि वे भी गिरफ्तार हो जायें तो बाबू धरणीधर और बाबू रामनवमी प्रसाद इसका भार अपने ऊपर लें। उनके बाद मुझे, बाबू शंभूशरण और अनुग्रह नारायण सिंह को इस काम को जारी रखना होगा। इन तीनों टोलियों को हटाते-हटाते नये लोग आ जायेंगे और वे आगे की योजना बनायेंगे।

अगले दिन से झुंड-के-झुंड रैयत आने लगे और उनके बयान लिखे जाने लगे। महात्माजी भी स्वयं किसी-किसी का बयान लिख लेते थे। दूसरों के लिखे बयानों को पढ़ लिया करते। उन्होंने बयान लिखने वालों से कह दिया था कि जहां तक हो सके, रैयतों से जिरह करें और जो बात सच्ची प्रतीत हो, उसी को लिखें। यदि कोई बात ऐसी जान पड़े, जिसमें शीघ्र जांच की आवश्यकता हो, तो उसकी सूचना महात्माजी को दें। तीन बजे दोपहर को सी. एफ. एंड्रूज साहब आ पहुंचे। चंपारण के लोगों को उनसे मिलने का कभी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। कभी ऐसे किसी दूसरे अंग्रेज को भी देखने का चंपारण वालों को मौका नहीं मिला था। उनका सादा लिबास, सीधी बातें और सबसे बढ़कर उनका प्रेम देखकर सब मुग्ध हो गये। महात्माजी ने उन्हें सारी बातें कह सुनाई। वे उसी दिन कलेक्टर से मिलने गये, पर मुलाकात नहीं हुई।

20 अप्रैल 1917 की सुबह मि. एंड्रूज जिला कलेक्टर मि. हिकॉक से मिले। उन्हें मालूम हुआ कि मुकदमा उठा लिया जायेगा और सरकारी अफसर जांच में महात्माजी की मदद करेंगे। इसकी सूचना अभी तक हम लोगों को नहीं मिली थी। 19 अप्रैल 1917 की शाम 7 बजे मुकदमा उठा लेने का नोटिस भी आ गया। महात्माजी ने निश्चय किया कि वे कल 24 अप्रैल 1917 (रविवार) को बेतिया जायेंगे। ❑

'युद्ध और शांति' बनाम 'युद्ध और ध्रुवीकरण'

भारत में युद्ध करना किसके हाथ में होता है?

❑ गोपालकृष्ण गांधी

'युद्ध और शांति।' लियो टॉलस्टाय के प्रसिद्ध उपन्यास के इस प्रसिद्ध शीर्षक की तरह ये तीन शब्द ठीक ऐसे ही हमारे संविधान में भी मौजूद हैं। केन्द्र की अनुसूची में 15वीं प्रविष्टि में। हमारे साधारण जनमानस में इसका सीधा-साधा अर्थ यह निकलता है कि केन्द्रीय सरकार, और केवल केन्द्रीय सरकार ही, यह तय कर सकती है कि कब युद्ध की घोषणा हो और कब शांति बहाल हो।

आज हमारा देश लगभग युद्ध की स्थिति में है। लगभग क्यों? क्योंकि युद्ध की घोषणा केन्द्र सरकार ने नहीं की है। न ऐसी कोई घोषणा आयी है कि राष्ट्रपति महोदय के तरफ से, जो प्रचलित मान्यता के हिसाब से हमारे सैन्यबल के 'सर्वोच्चतम कमांडर' हैं। इनके पद में हमारी सेना का सर्वोच्चतम कमांड अवस्थित है। इस बारीकी पर ध्यान दिलाने का कारण भी जान लें। जब कभी राष्ट्रपति युद्ध की घोषणा करते हैं, तो वे ऐसा केन्द्रीय मंत्रिमंडल की मदद और सलाह से ही कर सकते हैं।

चाहे वह घोषित हो या अघोषित, भारत में युद्ध या भारत द्वारा युद्ध करना केवल मौजूदा प्रधानमंत्री के हाथ में होता है। यह किसी भी 'भारतीय युद्ध' की पहली शर्त है।

हमारा देश अब तक पांच बार युद्ध कर युका है। इनमें से चार बार यह एक ही देश से था—पाकिस्तान से। सन् 1947-48, फिर सन् 1965, फिर सन् 1971, और आखिरी बार सन् 1999 में। क्या इन चारों दफा युद्ध की घोषणा की गयी थी?

सन् 1947-48 में युद्ध की घोषणा करने का समय ही नहीं था। यह प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का युद्ध था। दूसरे भारत-पाकिस्तान युद्ध के समय लालबहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री थे। बिना किसी घोषणा के युद्ध 5 अगस्त 1965 को शुरू हो गया था।

13 दिवसीय तीसरा भारत-पाकिस्तान युद्ध इंदिरा गांधी के कार्यकाल में हुआ। इस बार औपचारिक युद्ध की घोषणा हुई 3 दिसंबर 1971 की शाम को। पाकिस्तान की वायुसेना ने उत्तर-पश्चिम भारत की 11 हवाई पट्टियों पर हमला बोल दिया था। उस शाम प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आकाशवाणी से देशवासियों को संबोधित करते हुए कहा कि पाकिस्तानी वायुसेना का आक्रमण युद्ध की घोषणा ही है, और भारतीय वायुसेना ने जवाबी कार्यवाही उसी रात शुरू कर दी थी।

इस शृंखला का आखिरी संग्राम मई-जुलाई 1999 में घटा था और यह प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी का युद्ध था। इसकी शुरुआत हुई थी पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा नियंत्रण रेखा के इस पार घुसपैठ करने से, जिससे हम चौंक गये थे, बल्कि हमें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि ऐसा असल में हुआ है। हम युद्ध की घोषणा करते, उसके पहले ही युद्ध हम पर आ खड़ा हुआ था।

चाहे संविधान की 15वीं प्रविष्टि के अनुसार युद्ध की घोषणा हुई हो या नहीं, थे तो चारों ही युद्ध। चारों ही तत्कालीन प्रधानमंत्री के नाम के साथ जुड़े हैं, फिर चाहे उसका असर अच्छा हो या बुरा।

आज हम युद्ध की दहलीज पर खड़े हैं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का युद्ध। टॉलस्टाय के शब्द हमारे संविधान में लाल झंडे से चेतावनी भी देते हैं और हरे झंडे से

युद्ध की स्वीकृति भी। भारत के नागरिक होने के नाते हमें यह भरोसा रखना चाहिए कि अगर यह युद्ध होता है, तो यह न्यायसंगत होगा, साफ-सुथरे तरीकों से लड़ा जायेगा, और यह सीमा पार से प्रयोजित आतंकवाद को उसकी ठीक जगह बता देगा। लेकन इस सबकी नौबत आये उसके पहले, समय रहते हमें एक सवाल अपने आपसे पूछना चाहिए—पिछले चार युद्धों से हमें क्या हासिल हुआ?

आशंका है कि 1947-48 के पहले भारत-पाकिस्तान युद्ध में भारत की ओर से 1500 लोग मारे गये थे और 3500 हताहत हुए थे। पाकिस्तान की ओर से 6 हजार मारे गये और 14 हजार घायल हुए थे। प्रधानमंत्री नेहरू की सेना ने पाकिस्तान को एक कड़ा सबक सिखाया था, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय दबाव और गवर्नर जनरल माउंटबेटन के रवैये की वजह से नेहरूजी युद्ध विराम के लिए राजी हो गये। पाकिस्तान के हाथ पुराने कश्मीर राज्य का एक-तिहाई हिस्सा लगा, जो एक नये देश के लिए बढ़ोतरी ही थी। भारत के पास बचा कश्मीर की वादी का बचा हुआ हिस्सा, लद्दाख और जम्मू।

कौन हारा, कौन जीता?

दूसरे युद्ध में भारत की तरफ नुकसान था 3 हजार सैनिकों का, पाकिस्तान की तरफ 3800 का। भारत के कब्जे में पाकिस्तान का एक बड़ा हिस्सा था और लाहौर के एकदम बगल तक भारतीय सेना पहुंच गयी थी। परंतु प्रधानमंत्री शास्त्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान के बीच हुए ताशकंद घोषणापत्र के बाद दोनों सेनाओं को युद्ध के पहले की स्थिति में लौटना पड़ा, उन सीमाओं के पीछे, जो अगस्त के पहले थीं।

कौन हारा, कौन जीता?

कारगिल में लड़े गये 1999 के युद्ध के अंदाजों में भारी अंतर आता रहता है, फिर भी ऐसा माना जाता है कि पाकिस्तान के एक हजार सैनिक मारे गये और भारत के 550, जिनमें से कई वरिष्ठ अफसर थे। पाकिस्तान को उन सब ठिकानों से पीछे हटना पड़ा, जिन पर उसने कब्जा कर लिया था।

इन चार युद्धों में से जो फायदा भारत को मिला, जिसे कि कुल योग में हम लाभ की संज्ञा दे सकते हैं, उसका हिसाब लगाया जा सकता है। एक, भारत की तेज प्रतिक्रिया की वजह से पाकिस्तान को यह सबक मिला कि भारत को उकसाना, सीमा या कश्मीर की नियंत्रण रेखा को लांघना न काम आया है, न कभी उसके काम ही आयेगा। दो, भारत की तीव्र प्रतिक्रिया और सक्रिय नीतियों की वजह से बांग्लादेश आज दक्षिण एशिया के नक्शे पर मौजूद है। यह उस दो-राष्ट्र सिद्धांत की पराजय का सबसे बड़ा प्रमाण है जिसकी वजह से भारत का विभाजन करके पाकिस्तान बनाया गया।

तीन, 1966 का ताशकंद घोषणा-पत्र और 1972 का शिमला समझौता, दोनों ही हमें बतलाते हैं कि युद्ध करना सिरफिरापन है, और शांति ही दोनों पड़ोसियों के साथ-साथ रहने का एकमात्र तरीका है। कारगिल के युद्ध के पहले भी और बाद में भी प्रधानमंत्री वाजपेयी की पाकिस्तान से बातचीत करने की इच्छा भी ताशकंद और शिमला की तर्ज पर ही थी। उनके पहले प्रधानमंत्री इंद्र कुमार गुजराल और उनके बाद मनमोहन सिंह ने भी इन्हीं समझौतों की तर्ज पर संबंध सुधारने का माहौल बनाने की कोशिश की। इसमें शिमला समझौते का असर जरा ज्यादा है, क्योंकि उसपर हस्ताक्षर भी हुए हैं और उसकी पुष्टि भी हुई है।

क्या इन चार युद्धों के ये तीन नतीजे आज भारत-पाकिस्तान के मानस में हैं? एकदम नहीं!

हमें याद करना चाहिए उन दो भारतीयों को, जिन्होंने इन समझौतों के कागजों पर अपने हस्ताक्षर किये। प्रधानमंत्री शास्त्री और इंदिरा गांधी, दोनों को कोई भी डरपोक नहीं कह सकता। जिन समझौते पर इन्होंने अपने नाम लिखे उसकी भाषा को एक बार याद कर लेना चाहिए—''भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति मानते हैं कि दोनों पक्ष, भारत और पाकिस्तान के बीच अच्छे पड़ोसियों के से संबंध बनाने के लिए वे संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुरूप हर संभव प्रयास करेंगे। दोनों ही संयुक्त राष्ट्र चार्टर के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दोहराते हैं कि हिंसा का सहारा नहीं लेंगे और शांतिपूर्ण तरीकों से ही अपने विवाद सुलझायेंगे।'' *(ताशकंद घोषणा-पत्र, 10 जनवरी 1966)*

''भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार ने यह निश्चय किया है कि दोनों ही देश उस संघर्ष और टकराव का अंत करेंगे जिसने उनके संबंध बिगाड़े हैं। दोनों मित्रवत और सौहार्दपूर्ण संबंध बनाने के लिए काम करेंगे....एक दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता और आधिपत्य का सम्मान करेंगे और एक-दूसरे के अंदरूनी मामलों में दखल नहीं देंगे।'' *(शिमला समझौता, 2 जुलाई 1972)*

प्रधानमंत्री वाजपेयी ने नियंत्रण रेखा पर युद्ध विराम के लिए सन् 2003 में जो हामी भरी थी, उससे ताशकंद और शिमला समझौते की भावना को बल ही मिला था। यह पहली दफा हुआ था कि भारत और पाकिस्तान एक ऐसे युद्ध विराम पर राजी हुए थे, जो अंतर्राष्ट्रीय सीमा, नियंत्रण रेखा और सियाचिन के हिमनद, तीनों पर लागू था।

हमारे संविधान में केन्द्रीय अनुसूची में 'युद्ध' का विशेषाधिकार भी दर्ज है और 'शांति' का विशेषाधिकार भी दर्ज है। नेहरू, शास्त्री, इंदिरा गांधी और वाजपेयी ने अपने-अपने समय में जिस विशेषाधिकार को चुना उस समय में और आज के समय में क्या अंतर आ गया है?

आतंकवाद की जानकारी तब भी थी, आज भी है, हालांकि उसने आज कहीं अधिक खतरनाक और चालाक भेष धर लिया है। दोनों ही देशों में असहिष्णुता का बोलबाला है। असहिष्णुता का उन्माद दोनों ही तरफ खोद-खोद कर उभरा जा रहा है, उन लोगों द्वारा जो युद्ध चाहते हैं। वे किसी भी तरह की घोषणा की प्रतीक्षा करने की बजाय, युद्ध के छिड़ने के पहले ही युद्ध का महौल बनाने में निरंतर लगे हुए हैं।

पाकिस्तान में इस तरह के लोग सेना में भी हैं और इस्लामी धार्मिक नेतृत्व में भी।

आतंकवादी संगठनों के रूप में उन्हें उनका निकृष्ट काम करने वाले प्यादे मिले हुए हैं। भारत में हिन्दुत्व को पाकिस्तान संरक्षित आतंकवादी संगठनों के रूप में ऐसे दोस्त मिले हुए हैं जो शत्रु का जामा ओढ़े हुए हैं।

आतंकवाद और हिन्दुत्व एक-दूसरे का काम, एक-दूसरे का सहयोग करते हैं। दोनों ही अपने-अपने देश की भोली-भाली और शंकालु जनता के सामने एक अलग किस्म का राष्ट्रवाद रख रहे हैं। इसे राष्ट्रवाद नहीं, नफरतवाद कह सकते हैं। दूसरे देश के प्रति नफरत, दूसरे देश में व्याप्त धर्म के प्रति नफरत। असल में दोनों की दुश्मनी है उदार धर्मनिरपेक्षता से, बहुलतावाद से, सहयोग से। दोनों एक ही हथियार का इस्तेमाल करते हैं—लोगों को भड़काना। दोनों का आधार भी एक ही है—कट्टरपंथ। एक-दूसरे के बिना दोनों का ही अंत होना निश्चित है।

दोनों ही एक-दूसरे के राष्ट्रवाद के सहारे जीते हैं—एक ऐसा राष्ट्रवाद जो टिका हुआ है गलतफहमी, प्रमाद और बहकावे पर।

नफरत के नगाड़ों की ताल पर भारत और पाकिस्तान, दोनों ही युद्ध की मानसिकता में धकाये जा रहे हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि अगर युद्ध होता है, तो हम उसके लिए तैयार रहें। इसका मतलब है युद्ध को चाहना, उसे न्यौता देना। दोनों में फर्क है।

प्रधानमंत्री वाजपेयी के कार्यकाल के दौरान सन् 2003 में ही भारत की सैन्य नीति और सुरक्षा के विशेषज्ञ जॉर्ज पर्कोविच ने कह दिया था : ''पाकिस्तानी लोग राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और विश्व हिन्दू परिषद का हवाला देते हैं, इसे प्रमाण बताते हैं कि हिन्दू लोग मुसलमानों का विनाश करना चाहते हैं, और पाकिस्तान का भी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और विश्व हिन्दू परिषद, जाहिर तौर पर, इस्लामवादी गुटों और आतंकवादी संगठनों की पाकिस्तानी राजनीति में महत्ता को इसका प्रमाण बताते हैं कि मुसलमान दुष्ट हैं। अगर भारत अपने आपको पाकिस्तान से आजाद करना चाहता है, तो उसका एकमात्र तरीका बहुलतावाद है, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद नहीं।'' वे अपनी बात आज दोहरा सकते हैं और उनके साथ हम भी एक बार और यह कह सकते हैं।

लेकिन हमें यहीं रुकना नहीं चाहिए। हमें कुछ और भी करना चाहिए। हमें अपने प्रधानमंत्री पर विश्वास करना चाहिए, चाहे उनका मानस समझना कितना भी कठिन क्यों न हो। हमें विश्वास करना चाहिए कि वे याद करेंगे कि उनसे पहले के प्रधानमंत्रियों ने 1965, 1971 और 1999 में क्या किया। शास्त्रीजी ने, इंदिराजी ने, वाजपेयीजी ने। यह भी याद करेंगे कि इन तीनों ने किस तरह युद्ध को किनारे रखा। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि आतंकवाद को दोषमुक्त करार दे दिया जाये। इसका मतलब है कि हम अनावश्यक प्रतिक्रिया और आत्मविनाश करके आतंकवाद को अनुग्रहित न करें। भूतपूर्व राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार एम. के. नारायण की सूझबूझ भरी सलाह हाल ही में एक लेख में छपी है। दिल्ली की सरकार को उनकी सलाह सुननी चाहिए।

चाहे घोषित हो या अघोषित, युद्ध में ईंट का जवाब पत्थर जैसी कोई चीज होती ही नहीं है। इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती। 'सर्जिकल स्ट्राइक' के बाद जल्दी ही शल्योतर पेचीदगियां भी आती हैं। उन जटिलताओं की कीमत कौन चुकायेगा? क्या वे चुकायेंगे, जो आज 'ईंट का जवाब पत्थर' की सी बातें कर रहे हैं? वे नहीं चुकायेंगे। फिर क्या वे, जो एक नये भारत का झूठा वादा कर रहे हैं? वे तो बिलकुल नहीं चुकायेंगे।

सैनिकों को लड़ने का प्रशिक्षण मिलता है, संग्राम में लड़ने-मरने की हद तक! अगर युद्ध होता है तो ये ही साहसी सैनिक उस संग्राम में लड़ेंगे। हम सब उन सैनिकों का सम्मान करेंगे, जैसा कि होना ही चाहिए। लेकिन जैसे हमारे सैनिक अपने कर्तव्य का निर्वाह लड़कर करेंगे, वैसे ही हमें शांति के प्रति अपनी जिम्मेदारी भूलनी नहीं चाहिए। यह याद रखना चाहिए कि 'युद्ध और शांति' केन्द्र की सूची में एक ही प्रविष्टि में आते हैं। इसे ध्यान में रखते हुए हमें, आपको भी और मुझे भी, हम सबको एक और युद्ध लड़ना चाहिए।

यह लड़ाई है युद्ध के लिए ललकारने वाली मानसिकता के साथ, एक ऐसी प्रवृत्ति के साथ जो युद्ध को आकर्षक बनाती है। जो हमारे जनमानस को परमाणु अस्त्रों में परिवर्तित कर देती है। हमें सांप्रदायिक कट्टरपंथ की कतार से हट कर धर्मनिरपेक्ष विवेक की पंक्ति में खड़े हो जाना चाहिए। हम सबको उस अपंजीकृत प्रविष्टि के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर देनी चाहिए, जो हमारे संविधान में 'युद्ध और शांति' की जगह 'युद्ध और ध्रुवीकरण' के कड़वे शब्द जबरन घुसाना चाहती है। हमें इन अनैतिक शब्दों की घुसपैठ को नियंत्रण रेखा पर ही रोकना है। ❑

कार्यशाला का आयोजन

गुर्जर खरूई न्यू तरुण संघ, पूर्व मिदनापुर द्वारा तथा गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली के सहयोग से **"Upliftment of Village Children Trhough Gandhian Thoughts"** विषय पर आयोजित पांच दिवसीय (27 से 31 दिसंबर, 2017) कार्यशाला का उद्घाटन सर्व सेवा संघ के मंत्री चंदन पाल द्वारा किया गया। स्वामी विवेकानंद तथा गांधीजी की प्रतिमा पर पुष्प अर्पित एवं दीप प्रज्ज्वलित कर कार्यशाला का शुभारंभ हुआ।

कार्यशाला को संबोधित करते हुए बतौर मुख्यअतिथि चंदन पाल ने अपने उद्घाटन उद्बोधन में कहा कि वर्तमान समय में देश की परिस्थिति विषम हो गयी है। इस परिस्थिति से देश को बचाने का समाज के पास बस एक ही विकल्प है, और वह है गांधी-विचार। सभी धर्मों के लोगों को गांधीजी के रास्ते पर चलना होगा और एक अलग वातावरण का निर्माण करना होगा।

इस अवसर पर पूर्व विधायक विप्लव राय चौधरी, स्थानीय पंचायत प्रधान, कई सदस्य और गणमान्य व्यक्ति तथा काफी संख्या में छात्र-युवा व महिला उपस्थित रहीं। **–स. ज. प्रतिनिधि**

हिमालय : 'विकास' यानी पागल दौड़

❑ राधा भट्ट

इन दिनों देश में विकास का प्रकृति, पर्यावरण के साथ जबरदस्त संघर्ष चल रहा है। मानो एक युद्ध ही अनवरत चल रहा हो। आज की इन परिस्थितियों में 'विकास' हमारी दुनिया का सबसे अधिक भ्रमपूर्ण शब्द बन गया है। आंखों को चौधियां देने वाली विकास की चमक हमें इतना अंधा बना रही है कि हम नहीं देख पाते कि हम स्वयं अपनी जड़ों को ही उखाड़ रहे हैं। हवा में बन रहे एक महल की रचना के ख्याल में अपने घर की ईंटें उतार रहे हैं। हिमालय के बिगड़ते पर्यावरण पर 'हिमालय पुत्री' कहलाने वाली राधाबहन भट्ट की बेबाक टिप्पणी के तौर पर प्रस्तुत आलेख। –सं.

हिमालय एक अत्यंत नाजुक पर्वतमाला है, यह एक स्पष्ट सत्य है। वहीं यह भी उतना ही सत्य है कि हिमालय में खड़ा प्रत्येक हरा पेड़ देश का स्थायी प्रहरी है। हिमालय के गर्भ में जबरदस्त हलचल है जिसे प्रसिद्ध भूगर्भ शास्त्री प्रो. के. एस. वल्दिया कहते हैं, ''एशिया महाद्वीप और भारतीय भूखंड के बीच विस्तीर्ण हिमालय में विवर्तनिक हाहाकार चल रहे हैं'। 'ये हलचल अनेक भ्रंशों का निर्माण करती हैं, इन भ्रंशों के तनाव को भूकम्पों के रूप में बाहर निकलना होता है, ऐसी इस हिमालय की धरती में जहां छोटे भूकंपों की संभावना तो हमेशा बनी रहती है, कालांतर में किसी महाभूकंप का आना भी अनिवार्य रहता है, यहां की घाटियों और पर्वतों के ऊपर बसने वाले इंसान को अपने जीवित रहने के लिए प्रकृति से सहयोग का बर्ताव ही करना पड़ता है।

उत्तराखंड भूकम्पों से टूटी-फूटी चट्टानों को संभाले हुए हिमालय का ऐसा ही भाग है, इसका अधिकांश भाग इसी कारण भूस्खलन प्रवण-क्षेत्र है, ज्यों ही इसकी भूमि चट्टानों और वनसंपदा (जो यहां की मिट्टी को और भूमिगत जल को तो थामे रहती ही है, बाढ़ों की विशाल जलराशि और हिमखंडों के धक्कों से जन जीवन को भी सुरक्षा देती है) से छेड़छाड़ होती है। भूस्खलनों की अंतहीन घटनाएं मानव-जीवन को अस्त-व्यस्त कर देती है। छेड़छाड़ का अर्थ है, हरे वृक्षों का पालन (कटान), अंधाधुंध सड़कों के निर्माण के लिए पहाड़ों का कटान, सुरंगों के निर्माण के लिए शक्तिशाली विस्फोटकों का उपयोग और खनिजों के लिए खानों का खुदान।

दुर्भाग्य की बात है कि ऐसी अनियंत्रित कार्यवाहियों को 'विकास' कहा जाता है, उत्तराखंड में ऑल वैदर रोड के अंतर्गत हो रहा सड़कों का चौड़ीकरण और इन सड़कों के निर्माण का अत्यंत संवेदनहीन अवैज्ञानिक तरीका विकास और राष्ट्र-सुरक्षा के नाम पर की जा रही भयंकर छेड़छाड़ ही है। केन्द्र सरकार की चार-धाम ऑल वेदर रोड पर योजना के तहत उत्तरकाशी-गंगोत्री राजमार्ग की चौड़ीकरण फोरलेन के मानकों पर हो रहा है, जिसके लिए हर्षिल से गंगोत्री तक के 30 किमी में फैली सघन वृक्षावली में से 6 से 8 हजार हरे देवदार के वृक्षों को काटने की तैयारी उन पर छपान यानी निशान लगाकर कर दी गयी है।

ग्लोबल वार्मिंग के चलते गंगोत्री घाटी पूर्वापेक्षा काफी गर्म हो गयी है। वहां अब पहले से कम वर्फबारी होती है। गंगा का प्रण स्रोत गोमुख ग्लेशियर निरंतर टूट-फिसलकर घटता जा रहा है। वह प्रतिवर्ष कई मीटर पीछे खिसक जाता है। ऐसी स्थिति में उक्त 30 किमी में फैले घाटी के एकमात्र वन के हजारों हरे वृक्षों को काटना ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को और भी तीव्रता देने की गलती साबित होगा, क्योंकि वृक्षों की हरीतिमा वायुमंडल को शीतलता देती है। गोमुख और पास के अन्य ग्लेशियरों का पिघलना एक दिन गंगा के उद्गम स्रोत को इतना क्षीण कर देगा कि गंगा के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न खड़ा हो जायेगा।

ऐसे परिस्थितिकीय प्रश्नों के साथ-साथ एक अत्यन्त व्यवहारिक प्रश्न भी सड़क निर्माण तथा सड़क चौड़ीकरण की निर्माण पद्धति ने प्रस्तुत कर दिया है। हमने गंगोत्री घाटी बॉडर रोड आगेनाइेशन (बीआरओ) को शक्तिशाली विस्फोटकों से बड़ी-बड़ी चट्टानों की धाराशायी करते देखा था। एक बारगी पहाड़ हिल गया था। इससे निकले विशाल बोल्डरों व मिट्टी-मलुआ सबको सड़क किनारे के ढलान पर लुढ़का दिया गया था, जो भागीरथी के जल में जाकर अड़ गये थे। भागीरथी का जल मटमैला हो गया था। उसके किनारों पर मलुबा के बड़े-बड़े ढेर खड़े हो गये थे जो हिमालयी मूसलाधार वर्षा या बादल फटने पर नदी में बढ़ने वाले पानी के आकार को दसियों गुना बढ़ाकर गंगा के किनारे बसे नगरों-गांवों, वहां के पशुओं-मानवों, खेतों व करोड़ों रुपयों की लागत से बनी सड़कों पर ऐसा कहर बरपा करेगा कि कई वर्षों तक आपदा की यह मार जनसमाज को उठने नहीं देगी, क्या इसे विकास कहें?

मलुबे की यह समस्या केवल गंगोत्री घाटी की ही समस्या नहीं है। उत्तराखंड में प्रधानमंत्री सड़क योजना के अंतर्गत प्रत्येक गांव को मोटर-सड़क से जोड़ने का विकास सर्वोपरि महत्त्व के साथ चलाया जा रहा है। इन सभी सड़कों के निर्माण का मलबा पास में बहती नदियों पर्वतीय तीव्र ढलानों, गांवों के जलस्रोतों, चरागाहों, घासनियों यहां तक

की उपजाऊ फसलदार खेतों के ऊपर बड़ी-बड़ी चट्टानों सहित फेंक दिया जाता है, मलबा किसानों के जल, जंगल, जमीन, घास, लकड़ी, खेती को ही नहीं नष्ट कर रहा है वरन् इसने बस्तड़ी गांव (जिला पिथौरागढ़) की जिन्दा बस्ती को पिछली बरसात में पूरी तरह जमींदोज कर दिया था, यह स्पष्ट है कि उत्तराखंड में मलुबे की वैज्ञानिक व जिम्मेदार निस्तारण पद्धति के बिना सड़क निर्माण करना विकास कम विनाश ही अधिक है।

गंगोत्री घाटी की सड़क चौड़ीकरण की पद्धति के नमूने पर ही उत्तराखंड के तीन अन्य धामों के लिए भी ऑल वेदर रोड की योजना है, जिनके लिए करोड़ों की धनराशि आवंटित हो चुकी हैं। बद्रीनाथ की अलकनंदा, केदारनाथ की मंदाकिनी और यमुनोत्री की यमुना में फेंक गया निर्माण का मलुवा अंत में गंगा में ही मिलने वाला है। उन नदियों के ग्लेशियरों सतोपंथ, खत लिंग और यमुनोत्री की दशा भी गोमुख जैसी ही होने वाली है, क्योंकि वहां के वन भी वैसे ही कटने वाले हैं। तब गंगा की महत्त्वपूर्ण और महत्त्वाकांक्षी योजना 'नमामि गंगे' की 'अविरल निर्मल गंगा' का लक्ष्य कैसे सिद्ध होगा?

कुमाऊ मंडल में टनकपुर-पिथौरागढ़ हाइवे 125 के चौड़ीकरण का मोड़ भी ऑल वेदर रोड की तरह ही है, इसमें 4600 चौड़ी पत्ती के हो वृक्षों का कटान होना है, चौड़ी प्रत्ती के ये वृक्ष जल संवर्धन के लिए अहम प्रजाति हैं। हिमालयी जल स्रोतों की घटती जल धाराओं को पुनर्जीवित करने के लिए एक ओर करोड़ों का धन व्यय किया जा रहा है, दूसरी ओर पीढ़ियों के वृक्षों को नष्ट कर दिया जा रहा है। क्या यह विरोधाभास किसी को दिखायी नहीं पड़ रहा है?

सरकार की एक योजना अपनी ही दूसरी योजना को मिटाने का काम कर रही है। चाहे वह ''नमामि गंगे'' की 'अविरलता निर्मलता' पर चोट करते घटते ग्लेशियर व मलुवे से बोझिल प्रदूषित भागीरथी गंगा हो, चाहे तेजी से घट रहे जल स्रोतों व नदियों के संकट से मुक्ति पाने के लिए एक और जलगम संरक्षण की परियोजनाओं पर करोड़ों की धन राशि व्यय हो और दूसरी ओर सुंदर विकसित चौड़ी पत्ती के वृक्षों को हजारों की संख्या में कटवाने वाली मोटर रोड का निर्माण हावे और चाहे किसान की प्रगति व आत्मनिर्भरता की कई नई-नई स्कीमें हो और उन्हीं कृषकों की जमीन, जंगल, चारागाह और जलस्रोतों को निर्दयता से दबाने वाला सड़क निर्माण का मलबा हो।

क्या ऐसे विकास पर प्रश्न नहीं उठाने चाहिए या केवल झेलते जाना चाहिए? गांधीजी के शब्दों में यह 'पागल दौड़' (Mad Race) है। विकास, विकास चिल्लाते हुए विनाश की और बेतहाशा भाग रही पागल दौड़ को रोकने के लिए यदि हम अपनी आवाज नहीं उठाते, इस मूर्ख दौड़ को रोकने की कोशिश नहीं करते हैं तो कल उसके भयंकर परिणामों के भागीदार हम भी होंगे। इतिहास क्या हमें माफ करेगा? इसलिए जितना संभव हो उतनी ऊंची आवाज में हर कोने से चिल्ला कर सावधान करने की आवश्यकता है। ❑

श्रद्धांजलि एवं संवेदना

सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय, सेवाग्राम के कार्यकर्ता श्री मारोति गावंडे की पूज्यनीय माताजी; शांता बाई का निधन 8 फरवरी, 2018 को हो गया। आप 83 वर्ष की थीं।

निधन का दुःखद समाचार सुनकर वाराणसी कार्यालय के सभी कार्यकर्ताओं में शोक व्याप्त हो गया। सायं 5 बजे शोक-सभा का आयोजन कर सभी कार्यकर्ताओं ने सर्वधर्म प्रार्थना का पाठ करने के उपरांत दो मिनट का मौन रखकर उनके प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की।

सर्वोदय जगत परिवार ईश्वर से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शांति एवं परिवारीजनों को इस असहनीय दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

–स.ज. प्रतिनिधि

सर्वोदय कैसे

❑ **महात्मा गांधी**

सत्याग्रह के सिवा सर्वोदय असंभवित है। यहां सत्याग्रह का धात्वर्थ लेना चाहिए। सत्य का आग्रह बगैर अहिंसा के हो नहीं सकता है। इसलिए सर्वोदय की सिद्धि अहिंसा की सिद्धि तपश्चर्या पर निर्भर है। तपश्चर्या सात्विक होना चाहिए। उसमें अविश्रांत उद्यम, विवेक इत्यादि समाविष्ट हैं। शुद्ध तप में शुद्ध ज्ञान होता है। अनुभव बताता है कि लोग अहिंसा का नाम तो लेते हैं लेकिन बहुतों को मानसिक आलस्य इतना रहता है कि वे वस्तुस्थिति के परिचय तक करने का परिश्रम नहीं उठाते हैं। दृष्टांत लीजिए। हिन्दुस्तान कंगाल है। हम कंगालियत दूर करना चाहते हैं। लेकिन कंगालियत कैसे हुई इसका अर्थ क्या है, कैसे दूर हो सकती है इत्यादि का अभ्यास कितने लोग करते हैं? अहिंसा का भक्त तो ऐसे ज्ञान से भरा हुआ होना चाहिए।

जिस प्रकार का साधन पैदा करना 'सर्वोदय' का कर्तव्य है। नहीं कि किसी के साब वाद-विवाद में पड़ने का। 'सर्वोदय' के संचालक गांधीवाद जैसी कोई वस्तु नहीं है। मैंने कोई नयी चीज हिन्दुस्तान के सामने रखी नहीं है, प्राचीन वस्तु को नये ढंग से रखी है। उसका उपयोग नये क्षेत्र में करने की चेष्टा की है। इस कारण मेरे विचारों को गांधीवाद कहना उचित नहीं होगा। हम तो जहां मिले वहां से सत्य लेंगे, जहां देखें वहां उसकी तारीफ करेंगे, उसका अनुकरण करेंगे।

अर्थात् सर्वोदय के प्रत्येक वाक्य में अहिंसा भी ज्ञान का दर्शन होना चाहिए।

सेवाग्राम, 21-7-'38 ❑

साहित्य-समीक्षा

जीवन की मार्मिक एवं जीवंत अनुभूतियों संग 'मन हुआ पलाश'

❑ हृषीकेश पाठक

डर में उपजी सुगंध का पुष्प है कविता। कविता का जन्म करुणा में होता है, परंतु इसका विकास हृदय-प्रदेश में होता है। कवि कुंवर नारायण का कहना है कि कविता मनुष्य की आत्मा के सौंदर्य को संवर्द्धित करती है, क्योंकि सभ्यताओं के संघर्ष के दौर में वह मनुष्य को उसकी मनुष्यता से भर देना चाहती है। कविता अब स्वान्तः सुखाय की दीवार को तोड़कर सर्वान्तः सुखाय के लिए गढ़ी जा रही है। अनादिकाल से कविता मनुष्य की हृदय-तंत्रियों को झंकृत करती रही है। कविता एक सुकोमल भाव है, जो आह से निकलकर वाह तक जाती है। कविता की मूल प्रकृति—करुणा, न्याय और प्रतिरोध है। लेकिन कविता का प्रेम से अन्योन्याश्रम संबंध रहा है। प्रेम पर ढेरों कविताएं लिखी गयीं। प्रेम एक शाश्वत सत्य है, जो प्रत्येक प्राणियों के हृदय में रहता है। जिसने प्रेम को स्वच्छता का परिधान पहनाया, उसका तार ईश्वर से जुड़ गया। यही तो है, जिसे 'हममें-तुममें, खड्ग-खम्भ' में देखा जा सकता है। जो सर्वत्र व्याप्त है, वही तो ईश्वर है।

आलोच्य काव्य-संग्रह 'मन हुआ पलाश' की कवयित्री रश्मि शर्मा ने इस संग्रह की कुल तिहत्तर कविताओं के माध्यम से जीवन के अनुभवों की मार्मिक और जीवंत छवियों को मुखरित किया है। आज के समकालीन माहौल में प्रेम पर कविता लिखना जोखिम के तीक्ष्ण तलवार की धार पर चलना है। लेकिन ढाई आखर प्रेम को भी नकारा नहीं जा सकता और मीरा-कृष्ण के परिपक्व प्रेम को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। ऐसे में 'मन हुआ पलाश' की कविताएं अपनी

सशक्त उपस्थिति को लेकर रेशे-रेशे में कला की चित्रशीलता और जीवन की प्रेमिल पीड़ा को लेकर काफी आश्वस्त करती हैं। कविता 'ठहरे लम्हों में' कवयित्री कितनी आशावादी है—ठहरा ज़रा/बेरंग लगती जिन्दगी में एक बार/साक्षी बनकर देख लो/कोई भी गया वक्त बुरा नहीं होता।

'उदास होना लग्ज़री है' कविता में कवयित्री की प्रेमिल पीड़ा छलक कर बाहर आती है कि—उदास होना/लग्ज़री है मेरे लिए/जबकि/भूखी हैं 'एक्वेरियम' की/सुनहली मछलियां/छत पर इंतजार में बैठे हैं/सैकड़ों कबूतर/कुछ दानों की आस में/झपट पड़ते हैं आहट पा/और मैं/गहराती उदासी में डूबती/जबरन रोकती हूं/आंसुओं को छलकने से।

भाव से परिपूर्ण अंतरंग का लहूलुहान होना और इसके बावजूद अपने को दुःख नहीं पहुंचाना चाहती है कवयित्री। वे अपनी कविता 'कोई छीलता जाता है' में लिखती हैं—मन पेंसिल-सा है/इन दिनों/छीलता जाता है कोई/बेरहमी से/उतरती हैं/आत्मा की परतें/मैं तीखी गहरी लकीर/खींचना चाहता हूं/उसके वजूद में...मन अब हो चुका है/बहुत नुकीला/पर इसे ही चुभो कर/दर्द दिया नहीं जाता, उसे/जिसे अपनाया है।

'देखना है इन उदास आंखों की तरह' कविता में कवयित्री ने अपने अनुभव और मंजे हुए शब्द से उम्मीद को जगह देने की तसल्ली देती है—खाली घर हो या दिल/चीजें तरतीब से रखना/बहुत आसान है, मगर/किसी के दिल में/रहने की गुंजाइश बनाना/उस पर भी तबों पर मुस्कान सजाना/तब कहना/दर्द में लिपटी मुस्कान बेहद खूबसूरत होती है।

'करती हूं इंतजार' कविता में एक बेहद पीड़ा, छटपटाहट और कशक दिखती है, जब नायिका अपने नायक की प्रतीक्षा में पलक पांवड़े बिछाये खूबसूरत लम्हों को संजो रही है, लेकिन नायक एक औपचारिकता के पश्चात् अपनी ही दुनिया में बेपरवाह खो जाता है—जो थका-मांदा घर आता है/मेरे बालों में अपनी नाक घुसा/एक गहरी लंबी सांस खींचता है/और चाय का प्याला हाथ में थाम/टीवी ऑन कर/किसी भी चलती बहस में/खुद को शामिल कर लेता है/बिना ये सोचे, कि—/मेरे बदन से उठने वाली महक/खारे आंसुओं की है या पसीने की।

'जी नहीं लगता' कविता में प्रेम की कसमकश स्थिति को दर्शाया गया है—कई बार चाहा, कह दूं/जी नहीं लगता आपके बिन/मगर हर बार कहने से पहले/जुबां कांपती है/अतीत से निकलकर एक काली याद/आंखों पर छाती है/शब्द खामोश हो जाते हैं।

आलोच्य काव्य-संग्रह की कविताओं में विषय-वैविध्य भी है, किन्तु मूलतः इनकी कविताएं प्रेम के इंद्रधनुषी रंग से बनी-बुनी हैं। इसमें कविताएं बिम्ब, शैली और शब्दों के संयोजन के लिहाज से काफी कसी हुईं हैं। पं. रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार कविताएं कोई रसगुल्ला नहीं कि मुंह में डाला और कंठ के पार। इनकी कविताओं को समझने के लिए समझ की आवश्यकता है, सहजता की नहीं।

एक पंक्ति में कहना हो, तो कहा जा सकता है कि रश्मि शर्मा की सौम्यता पूरी तरह कविताओं में समायी हुई है और 'मन हुआ पलाश' काव्य-संग्रह जीवन की मार्मिक एवं जीवंत अनुभूतियों को मुखर करने में पूरी तरह कामयाब हुआ है। ❑

पुस्तक का नाम	:	**मन हुआ पलाश (काव्य-संग्रह)**
कवयित्री का नाम	:	**रश्मि शर्मा**
प्रकाशन	:	**अमन, महरौली, नई दिल्ली**
मूल्य	:	**320/- मात्र**

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा'

मोहनदास और बच्चे

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है—पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। **–संपा.**

मोहनदास और कस्तूरबा भारतीय जन पर आये उस अप्रत्याशित संकट से उबरकर कुछ सहज हुए थे। जोहन्सबर्ग में जीवन सहज होने लगा था। काली प्लेग के तीस मरीजों में से दो मरीजों को अपने मिट्टी-पानी के इलाज द्वारा बचाकर मोहनदास को सुकून मिला था। जिन बाकी इक्कीस मरीजों को, उनके साथी डॉ. गॉड्फ्रे नहीं बचा पाये थे, केवल दो को गांधी ने बचाकर सबको चकित कर दिया था।

अब उन्होंने बच्चों की पढ़ाई की तरफ ध्यान देना आरंभ किया। बच्चों की शिक्षा को लेकर डरबन प्रवास में भी पति-पत्नी में कहा-सुनी होती रहती थी। हरि ठीक से पढ़ाई न होने के कारण ही अपने मोटा बापू क साथ राजकोट में रहने लगा था। कस्तूरबा कई बार हरि की याद करके विह्वल हो जाती थी। उसे वह अपना सबसे अक्लमंद बेटा मानती थी। मोहनदास अब भी उसी बात पर अड़े थे, वे बच्चों को वहां के सामान्य स्कूलों से बेहतर पढ़ा सकते हैं। कस्तूरबा अनपढ़ होते हुए भी यही मानती थी कि पढ़ाई स्कूल में ही होनी चाहिए। मोहनदास मणिलाल और रामदास को सबेरे पांच मील अपने साथ टहलाने ले जाते थे। रास्ते भर उन्हें पढ़ाते जाते थे। इस तरह का घुमंतू स्कूल वे डरबन में कभी-कभी हरिलाल और गोकुलदास के साथ भी लगाते थे। अब वह स्कूल लगभग नियमित हो गया था। मणिलाल और रामदास को दफ्तर भी साथ ले जाते थे। वहां उन दोनों को लिखने और याद करने का काम देते थे। उस काम को उन्हें निर्धारित समय सीमा के अंदर पूरा करना होता था। इस दौरान वे स्वयं मुवक्किलों से बात करते थे, दफ्तर का काम निबटाते थे अथवा अपनी सहायक मिस श्लेसिन को मसौदों का और पत्रों के जवाब का इमला देते थे। मिस श्लेसिन यहूदी थी और मोहनदास की बहुत विश्वसनीय थी। थकना एकदम नहीं जानती थी। लेकिन उनसे स्वतंत्रता भी लेती थी। एक दिन मोहनदास ने उसे किसी काम के लिए बुलाया। वह उठकर नहीं आयी अपनी सीट पर बैठी सिगरेट पीती रही। वे अक्सर स्वयं अपने सहयोगियों की सीट पर चले जाते थे। उनके पहुंचने पर भी उसने सिगरेट पीना जारी रखा। वे बोले, 'यह सब क्या है?'

उसने जवाब न देकर उनके मुंह पर धुआं छोड़ दिया। मोहनदास को, जिन्हें बड़ी से बड़ी गलती पर गुस्सा नहीं आता था, पता नहीं कैसे गुस्सा आ गया। उन्हेंने एकाएक चपत लगा दिया। तुरंत उन्हें लगा यह क्या कर डाला? फौरन माफी मांगी। श्लेसिन जोर-जोर से हंसने लगी। वह बोली, 'मैं देख रही थी मि. गांधी को गुस्सा आता है या नहीं।' गांधी ने जवाब नहीं दिया, वे वहां से चुपचाप चले गये। उनके दिमाग में यह सवाल घूमता रहा, इस तरह गुस्सा करना क्या हिंसा नहीं?

घर पहुंचने पर पति को परेशान देखकर कस्तूरबा ने कारण पूछा तो मोहनदास ने श्लेसिन के साथ हुई घटना के बारे में बताया। कस्तूरबा एकाएक जोर से हंस पड़ी। मोहनदास के कारण समझ में नहीं आया।

'हंसने की क्या बात है?'

'आप नहीं हंसे होंगे, इसलिए मैं हंस रही हूं। स्वयं चपत खाने का इंतजाम करे और फिर खाकर हंसे, हंसने के लिए क्या यह घटना कम है? अब हंस लीजिए। श्लेशिन आपके न हंसने पर निराश हुई होगी।'

एक दिन मोहनदास बच्चों के साथ लंबी दूरी तय करके घर से दफ्तर पहुंचे। वहां जाकर काम में लग गये। बच्चे दिया गया काम करने लगे। एकाएक उनकी नजर मणिलाल पर पड़ी, वह किताब आंखों के बहुत नजदीक लाकर पढ़ रहा था। उन्होंने पूछा, 'चश्मा क्यों नहीं लगाया?'

'लाना भूल गया, घर पर है।'

'चश्मा तुम्हारे पास होना चाहिए था, घर जाओ और चश्मा लेकर आओ, जिससे भविष्य में सदा चश्मा लाना तुम्हें याद रहे।' नाराजगी से कहा।

मणिलाल भरी दोपहर में थका-हारा, इतनी दूर चलकर घर पहुंचा। कस्तूरबा मणि को बेसमय आया देखकर चकित रह गयी, पूछा, 'क्या हुआ, इस समय अकेले कैसे आये?'

'चश्मा भूल गया था, बापू ने लेने भेजा है। लेकर फौरन ही लौट जाना है।' वह गर्मी में बेहाल था।

कस्तूरबा ने मोहनदास के आदेश पर बिना कोई टिप्पणी किये जल्दी-जल्दी खाना तैयार किया और उसे खिलाया। जब तक उसने खाना समाप्त किया वह उसका पसीना सुखाती रही। वह लगातार सोचती रही कि अपने बारह साल के बेटे को वह उसके पति के अपरिवर्तनीय सिद्धांतों के बारे में कैसे समझाये कि वे कठोर लगते हुए भी मानवीय हैं। उनके साथ जुड़ने के बाद ही उन्हें समझा जा सकता है। मुझे भी उन्हें समझने के लिए जद्दोजहद करनी पड़ रही है। वह मणि से बोली, 'मैं समझ सकती हूं कि तुमको बापू की इस बात से कैसा लगा होगा।' वह मणि की प्रतिक्रिया जानने के लिए रुकी। फिर बोली, 'कुछ समय पहले मेरे साथ भी डरबन में ऐसा ही हुआ था, तुम्हें याद है?'

मणिलाल चुपचाप ध्यान से सुन रहा था। बा ने याद दिलाया कैसे बापू ने सभी परंपराओं को अलग रखकर उसे एक ईसाई मेहमान के रात के पेशाब का पॉट खाली करने के लिए कहा था। मन कितना आहत हुआ था। उसके पीछे उनका इरादा अपमान करना नहीं था। वे चाहते थे कि परंपरागत छुआछूत के दकियानूसी विचारों को प्रसन्नता पूर्वक अनदेखा करके, सेवा की तरह लिया जाये। वे स्वयं भी पॉट साफ करते थे। वे कस्तूरबा के रोने पर उसे घर से निकालने के लिए तैयार हो गये थे। बाद में कस्तूरबा समझ पायी कि पॉट साफ करना उनके लिए कितना महत्त्वपूर्ण था। मनुष्य के अनचिह्नित अहंकार को मारने का रास्ता...। वह कोशिश करती थी कि जिस काम को वे करते हैं या करने को कहते हैं, उसके पीछे उनकी भावना को समझे। साथ ही कस्तूर ने भी मन ही मन तय कर लिया था कि वह पति की बात तब तक नहीं मानेगी जब तक वह उनके तर्क को समझ न ले। पहले समझेगी फिर अनुसरण करेगी।

अंत में समझाते हुए कहा, 'तुम्हारे बापू ऊपर से भले ही जिद्दी लगें पर वे अच्छे इनसान हैं। वे चाहते हैं उनके अच्छे बेटे बनो, इसीलिए श्रम-साध्य काम करने के लिए कहते हैं, श्रम शरीर को ही नहीं मस्तिष्क को भी मजबूत करता है।' कस्तूरबा ने मणि के अस्त-व्यस्त बालों में उंगलियां फेरीं, फिर कहा, 'बापू जैसा कहें वैसा करो, भले ही काम मुश्किल हो। अब जल्दी से निकल जाओ, इससे पहले कि वे सोचें कि तुम कहां रह गये दफ्तर पहुंच जाओ।'

बड़े भैया का राजकोट से मोहनदास के पास पत्र आया कि हरिलाल गंभीर रूप से बीमार है। उन्होंने कस्तूर को बताया तो कस्तूर इतनी परेशान हो गयी कि उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इतनी दूर से हरि के पास कैसे पहुंचे। सोचना जरूर आसान है पर जोहान्सबर्ग से राजकोट पहुंचना फिर वापिस आना आसान नहीं, असंभव है। उधर लक्ष्मीदास अपने परिवार के साथ राजकोट से अपने कदीमी घर में रहने पोरबंदर चले गये थे। राजकोट में विधवा बहन रलियत रह गयी थी अकेली। लक्ष्मीदास ने पत्र में यह भी लिखा था कि कोई चिन्ता की बात नहीं, हरिलाल को उसके ससुर हरिदास वोरा अपने घर ले गये हैं। दरअसल रलियत के पास कोई आदमी नहीं था जो जरूरत के वक्त भाग दौड़कर सके। वहां उसकी देखभाल अच्छी तरह हो रही है।

वहां अंदर ही अंदर हालात दूसरा मोड़ ले रहे थे। जब हरिलाल, हरिदास वोरा, होने वाले ससुर के घर में, स्वास्थ्य लाभ कर रहा था तो गुलाब, हरि की होने वाली पत्नी और वोरा जी की नंबर दो बेटी, एक दूसरे के संपर्क में आने के कारण विवाह पूर्व ही आपस में प्रेम करने लगे थे। ठीक होने पर जब हरिलाल अपने घर लौट गया तो दोनों के बीच प्रेम-पत्रों का आदान-प्रदान होने लगा। बहुत दिन तक किसी को पता नहीं चला।

मोहनदास के लिए यह समय उलझनों भरा था। 'इंडियन ओपिनियन' आर्थिक संकट में था। कर्ज उतरने का नाम नहीं ले रहा था। मदनजीत व्यवहारिक सह-संस्थापक, जो काम देखता था, वह भारत लौट रहा था। मोहनदास किसी विश्वसनीय व्यक्ति की खोज में थे। इत्तफाक से उन्हें एलबर्ट वेस्ट, एक अंग्रेज, मिल गया। वह जोहान्सबर्ग के ही एक प्रेस में हिस्सेदार रह चुका था। वह डरबन जाकर 'इंडियन ओपिनियन' संभालने के लिए तैयार हो गया। वहां पहुंचने के बाद एलबर्ट वेस्ट ने मोहनदास को डरबन आमंत्रित किया कि वे डरबन आकर सबके सामने पत्र की भविष्य की अपनी योजना रखें।

....क्रमशः अगले अंक में

गतिविधियां एवं समाचार

युवा सम्मेलन सम्पन्न

गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र एवं नेहरू युवा केन्द्र, जोधपुर के तत्त्वावधान में 28 जनवरी, 2018 को जिला युवा सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बतौर मुख्य अतिथि जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. आर. पी. सिंह ने युवाओं को संबोधित करते हुए कहा कि युवा समाज में अपनी पहचान बनाने के लिए श्रेष्ठ कार्य करें। सुंदर भविष्य निर्माण के उद्देश्य से युवाओं में कौशल, परिश्रम और रूचि की आवश्यकता है। इसके लिए युवा देश के प्रति जागरूक होकर अपनी जिम्मेदारी निभायें। राष्ट्रीय सेवा योजना के समन्वयक प्रो. जैताराम विश्नोई ने एनएसएस, एनसीसी, रेडक्रॉस से युवाओं को जुड़ने का आवाहन करते हुए कहा कि युवा गांवों में जाकर रुढ़ियों से मुक्त बनने का संदेश दें।

डॉ. पद्मजा शर्मा ने कन्या भ्रूण हत्या का विरोध करते हुए सच्ची घटना का जिक्र किया और स्वामी विवेकानंद का उदाहरण देते हुए कहा कि उन्होंने युवाओं संदेश दिया है कि मुसीबतें बंदरों की तरह पीछा करती हैं लेकिन जब आप डटकर उनका मुकाबला करते हैं तो पीछे हट जाती हैं। विशिष्ट अतिथि विधायक सूर्यकांत व्यास ने कह कि देश का युवा स्वच्छ भारत में अपना योगदान दें और संस्कारमय बनें। प्लास्टिक के प्रयोग को बंद करें एवं नशामुक्ति अभियान से जुड़ें।

युवा विचारक डॉ. ओपी टाक ने कहा कि गांधी व्यक्ति नहीं विचार का नाम है। उनका जीवन देश और दुनिया को मानवीय और सत्याग्रही बनाने के लिए समर्पित रहा। उनकी 150वीं जयंती मनाने के लिए हमें प्रायश्चित भाव से संकल्पबद्ध होना पड़ेगा। नौजवान पीढ़ी देश को जाति, धर्म एवं आर्थिक विषमता से मुक्त करने के लिए आगे आये और हिंसा मुक्त, अनीति व अन्याय से मुक्त भारत के निर्माण के लिए तन-मन-धन के साथ प्रयत्न करें। वास्तव में यही गांधीजी के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। डॉ. भावेन्द्र शरद जैन ने समय की पाबंदी एवं प्रबंध करने की सीख दी और समय की बर्बादी को अनैतिकता बताया। गांधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धांत पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इससे समाज में आर्थिक विषमता कम होगी और युवा कौशल विकास की ओर अग्रसर होकर भारत के विकास में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

सम्मेलन में एसएस जोशी, राजेश मीणा, जीके चावला, आरएस मोर, डॉ. कृष्णकुमार, डॉ. सतीश कुमार, जसवंत इंदा व प्रकाश चंद ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

× × ×

गांधी निर्वाण दिवस कार्यक्रम

30 जनवरी को गांधीजी के शहादत दिवस पर श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर शहरकाजी मोहम्मद तैय्यब अंसारी ने युवा वर्ग को पैगाम देते हुए कहा कि गांधीजी ने भारत को आजादी दिलाने के लिए अपना पूरा जीवन राष्ट्र को समर्पित कर दिया। देश में आज परिस्थितियां विषम हैं, जिसका विकल्प एकमात्र गांधीजी के विचार हैं। अतः गांधी-विचार को अपने आचरण में लाने की जरूरत है। पश्चिमी संस्कृति का हावी होना देश के लिए खतरा है। इसकी जगह पर 'सादा जीवन, उच्च विचार' के माध्यम से युवा अपनी पहचान बनायें।

मुख्य वक्ता डॉ. ओपी टाक ने कहा कि आज का दिन प्रायश्चित एवं संकल्प का दिन है, इसे हृदय से स्वीकार करते हुए गांधी के मार्ग को अपनाने एवं आचरण में नम्रता, सेवा और समभाव रखने पर बल दिया। गांधीजी के सपनों का भारत बन सकता है। गांधी शांति प्रतिष्ठान की उपाध्यक्ष आशा बोथरा ने कहा कि आज देश व विश्व की परिस्थितियों को देखने और समझने की आवश्यकता है। अभिव्यक्ति की आजादी व सहिष्णुता को बनाये रखें। इस अवसर पर राजघाट दिल्ली से प्राप्त गांधीजी की सीडी भी दिखायी गयी। अंत में 'वैष्णव जन तो तेने कहिये' भजन के साथ श्रद्धांजलि सभा का समापन हुआ। उपस्थित सभी लोगों ने गांधीजी के चित्र पर सूतांजलि अर्पित कर अपनी श्रद्धांजलि देते हुए नमन किया।

इस अवसर पर 'गांधी 150' कार्यक्रम का शुभारंभ करते हुए गांधीवादी विचारक त्रिलोकचंद गुलेच्छा ने गांधी स्टडी सेंटर को 101 पुस्तकों का सेट भेंट किया।

–डॉ. भावेन्द्र शरद जैन

श्रद्धांजलि सभा का आयोजन

गांधी स्मारक निधि, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल एवं चंडीगढ़ की ओर से महात्मा गांधी की 70वीं पुण्यतिथि पर 30 जनवरी, 2018 को गांधी स्मारक भवन, चंडीगढ़ में श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। सभा बड़ी संख्या में स्थानीय लोगों ने भाग लिया।

इस अवसर पर ब्लू बर्ड पब्लिक स्कूल, पंचकूला के बच्चों ने गांधीजी के प्रिय भजन 'वैष्णवजन तो तेने कहिये', 'रघुपति राघव राजा राम' एवं अन्य गीतों को प्रस्तुत किया। डॉ. देवराज त्यागी ने गांधी स्मारक निधि की गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए बताया कि यहां पर प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा उपचार, पुस्तकालय, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग में तीन वर्षीय डिप्लोमा तथा सिलाई-कढ़ाई केन्द्र जैसे कई रचनात्मक प्रवृत्तियां चलायी जाती हैं। मुख्य अतिथि सुलभ इंटरनेशनल के संस्थापक चेयरमैन डॉ. विन्देश्वरी पाठक ने गांधीजी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि गांधीजी के विचार कल भी प्रासंगिक थे, आज भी हैं और कल भी रहेंगे। गांधी के दर्शन को समझने की आज जरूरत है। यदि हम गांधी के विचारों पर चलते तो आज न तो कोई भूखा मरता न कोई आत्महत्या करता। केवल खादी पहनना गांधीवाद नहीं है बल्कि उनके विचारों को बढ़ाना ही गांधीवाद है। आपने संस्था के कार्य को देखते संग्रहालय के शेष कार्यों को पूर्ण करने के लिए 5 लाख रुपये देने की घोषणा की। संचालन डॉ. दलजीत कौर ने किया।

–देवराज त्यागी

दो कविताएं

हम गांधी की प्रतिभा के इतने पास खड़े

❑ हरिवंशराय बच्चन

हम गांधी की प्रतिभा के
इतने पास खड़े
हम देख नहीं पाते
सत्ता उनकी महान,
उनकी आभा से
आंखें होतीं
चकाचौंध,
गुण-वर्णन में साबित होती
गूंगी जबान।

वे भावी मानवता के हैं
आदर्श एक,
असमर्थ समझने में है
उनको वर्तमान,
वरना सच्चाई और अहिंसा
की प्रतिमा
यह जाती दुनिया
से होकर लहू लुहान!
जो सत्य, शिव, सुंदर,
शुचितर होती है
दुनिया रहती है उसके प्रति
अंधी, अजान,
वह उसे देखती, उसके प्रति
नतशिर होती
जब कोई कवि करता उसको
आंखें प्रदान।

जिन आंखों से तुलसी ने
राघव को देखा,
जिस अंतर्दृग से
सूरदास ने कान्हा को,
कोई भविष्य कवि
गांधी को भी देखेगा,
दर्शायेगा भी उनकी सत्ता
दुनिया को।

भारत का गांधी
व्यक्त नहीं तब तक होगा
भारती नहीं जब तक
देती गांधी अपना,
जब वाणी का मेधावी
कोई उतरेगा,
तब उतरेगा पृथ्वी पर गांधी
का सपना।

जायसी, कबीरा, सूरदास,
मीरा, तुलसी, मैथिली, निराला,
पंत, प्रसाद, महादेवी,
गालिबोमीर, दर्दोनज़ीर,
हाली, अकबर, इकबाल,
जोश, चकबस्त फिराक़,
जिगर, सागर की भाषा
निश्चयवरद
पुत्र उपजायेगी
जिसके प्रसाद-माधुर्य-
ओजमय वचनों में
मेरी भविष्यवाणी
सच्ची हो जायेगी। ❑

आ रहा है गांधी फिर से

❑ तारा सिंह

सुनकर चीख दुखांत विश्व की
तरुण गिरि पर चढ़कर शंख फूंकती
चिर तृषाकुल विश्व की पीर मिटाने
गुहों में, कंदराओं में,
बीहड़ वनों से झेलती
सिंधु शैलेश को उल्लासित करती
हिमालय व्योम को चूमती,
वो देखो!
पुरवाई आ रही है
स्वर्गलोक से बहती

लहरा रही है चेतना,
तृणों के मूल तक
महावाणी उत्तीर्ण हो रही है,
स्वर्ग से भू पर
भारत माता चीख रही है,
प्रसव की पीर से
लगता है गरीबों का
मसीहा गांधी
जनम ले रहा है, धरा पर
फिर से

अब सबों को मिलेगा
स्वर्णिम घट से
नव जीवन का जीवन-रस,
एक समान
क्योंकि तेजमयी ज्योति
बिछने वाली है
जलद जल बनाकर
भारत की भूमि
जिसके चरण पवित्र से
संगम होकर
धरती होगी हरी,
नीलकमल खिलेंगे फिर से
अब नहीं होगा खारा कोई सिंधु,
मानव वंश के अश्रु से
क्योंकि रजत तरी पर चढ़कर,
आ रही है आशा
विश्व-मानव के हृदय गृह को,
आलोकित करने नभ से
अब गूंजने लगा है उसका निर्घोष,
लोक गर्जन में
विद्युत अब चमकने लगा है,
जन-जन के मन में। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।